घर की रानी

[स्त्रीत्व; विवाहित जीवन की समस्याएँ और उनका हल]

लेखक
श्री रामनाथ 'सुमन'

प्रकाशक
साधना-सदन
६९, लूकरगंज, इलाहाबाद

किंग्सवे, दिल्ली

चेतगंज, काशी

एक रुपया

उस अमूर्त्त प्रतिमा की स्मृति मे

जिसका

स्पन्दन मेरे प्राणो मे अबतक है

मैं कहता हूँ

भूमिका लिखने का अगर फैशन है तो भूमिका लिखनी होगी पर मैं क्या लिखूँ ? जो कुछ मैं कहना चाहता हूँ, यह सारी पुस्तक ही उसकी भूमिका है। जो कुछ मैंने लिखा है, वह मेरे जीवन का रस है। मैं जो अनुभव करता हूँ, लिखता हूँ। स्त्रियों के प्रश्नों से, विवाहित जीवन की समस्याओं से मेरी दिलचस्पी पुरानी है। मैंने इनमें अपना बहुत समय लगाया है। सब तरह से इसे देखने-परखने की कोशिश की है।

पर इससे भी बड़ी बात यह है कि मैं स्त्रियों का एक हितैषी हूँ और अनुभव करता हूँ कि वे पथ-भ्रष्ट होकर अपने युग-युग के गौरव का तिरस्कार कर रही हैं। वे मानव-जाति की माता होने का अपना दावा छोड़ रही हैं। सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में उनका जो स्थान है, उससे हट रही हैं। वे अपने को गलत देख रही हैं, गलत समझ रही हैं। और प्रतिक्रिया तथा प्रतिहिंसा की धारा में बहती जा रही हैं।

इस विस्मृत और मूर्च्छित नारी को लेकर सभ्यता का मेरुदण्ड टेढ़ा हो रहा है; समाज अशान्त और शाप-ग्रस्त है, गृह-जीवन हाहाकार से भर गया है। जिस गृहस्थ जीवन, जिस गृह की नींव पर सम्पूर्ण सभ्यता का ढाँचा बना, जब वही अन्धकार से भरा हो तब समाज में प्रगति क्या होगी ?

तब हमारी पहली आवश्यकता गृह का पुनर्निर्माण करने की है और यह तब तक न होगा जब तक नारी यह समझती रहेगी कि गृह में उसका जो कार्य है वह नगण्य है। वस्तुतः संस्कृति और सभ्यता के निर्माण मे उसके गृह-कार्य का महत्व सब से अधिक है पर वह अदृश्य है; विज्ञापन उसका नहीं होता है इसलिए आज अपनी अभिव्यक्ति की भूखी नारी घबडा उठी है। पर नींव सदा अदृश्य ही रहती है और वही है कि जिसको लेकर महल की सारी जगमगाहट है।

जब १९३० में मैने 'भाई के पत्र' लिख कर इस ओर बहनों का ध्यान आकर्षित किया तब, इस दिशा मे मेरे अनुभव बहुत थोड़े थे। हाँ, जो कुछ लिखा उसमें ईमानदारी ज़रूर थी। कदाचित उसी का फल था कि वह पुस्तक अत्यन्त लोकप्रिय हुई। हज़ारों स्त्रियो के जीवन मे उसने प्रवेश किया और अनेक बहनों ने वेद-वाक्य की भाँति उसकी बातों को ग्रहण किया। दूर दूर की अज्ञात बहनों के कृतज्ञ हृदयों के उद्‌गार मुझे प्राप्त हुए है—अत्यन्त मृदुल, अपनेपन से भरे उद्‌गार। सैकड़ों बहनों का मै सचमुच भाई बन गया हूँ। मुझे उनके जीवन में प्रवेश करने का अवसर मिला है, मुझसे गोप्य और अगोप्य प्रश्न पूछे गये हैं।

मैंने इनका उत्तर दिया है। भरसक उनको हितकर सलाह दी है। पर इन पत्रो की संख्या बढ़ रही है और देखता मैं यह हूँ कि गृहस्थ-जीवन प्रायः निरानन्द, सूना और विषादपूर्ण हो रहा है। घर-घर में वही बात। प्राणी अभिशप्त और दुखी; दिलों पर परदा डाले हुए; अन्दर

अन्दर कराहते पर दुःख की घूंट को अपने मान की खातिर पी जाते हैं और यह वेदना, व्यथा और संचित हाहाकार मवाद की तरह अन्दर जाकर समाज-शरीर को विषैला और निकम्मा कर रहा है।

प्रायः स्त्रियाँ यही पूछती है कि कैसे वे पतियों का हृदय जीत सकती है ? बहुतों को अपना कोई दोष दिखाई नहीं देता। वे कहती हैं, मै सब कुछ करती हूँ फिर भी उपेक्षित हूँ। अब, आप बताइए क्या करूँ ? उपदेश तो आप बहुत देते है पर मुझे उपाय तो बताइए।

मै मानता हूँ, मेरे पास कोई जादू-टोना या मन्त्र नहीं है। न मैं जीवन में सुखी होने का कोई 'शार्ट कट' (जल्दी का रास्ता) जानता हूँ। अधीर होकर, घबड़ा कर स्त्रियाँ उसे नहीं पा सकतीं, जिसे पाना चाहती है। शान्त रहकर धीरज के साथ प्रयत्न करने से बहुत कुछ सम्भव है। गृहस्थ-जीवन के सुख के लिए 'अमृतधारा'—जैसी सब रोगों की एक ही दवा नहीं है। सस्कार, स्थिति, मनोदशा के अनुसार अलग-अलग दवाइयाँ हैं। फिर भी कुछ बातें ऐसी है जिनका पालन करके बहुत-सी कठिनाइयाँ दूर की जा सकती हैं, बहुत-सी समस्याये हल की जा सकती हैं और गृहस्थ जीवन से पारस्परिक मनोमालिन्य, उदासीनता और पीडा का बहुत-सा मल दूर किया जा सकता है तथा स्त्रियाँ पतियों का हृदय जीत सकती हैं।

इस पुस्तक मे ऐसी ही कुछ बातों और विधियों का वर्णन किया गया है। अधिकाश पत्र निजी रूप में लिखे गये थे। इसलिए उनमें एक

निजी स्पर्श तथा ईमानदारी है तथा इसी कारण पुस्तक अपने आप, उपन्यास की भाँति, रोचक हो गई है।

मुझे आशा है, हज़ारों बहनें इसे अपनायेंगी। पर उनका पंचमांश भी इससे पूरा लाभ उठा लें तो मैं अपना प्रयत्न सफल समझूँगा।

—श्री रामनाथ 'सुमन'

प्रयाग,
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
१५—८—४१

इसमें क्या है ?

घर की रानी

"हृदय में मधुर गन्ध, देह में मातृत्व का गौरव भरे, गृह के अणु-अणु में व्याप्त,—दीवारें जिसके हास्य से चमकती हैं, द्वार जिसके उदार हाथ से आतिथ्य के सत्कार की घोषणा करते हैं, तुलसी का चौरा जिसके अचल-दीप से आलोकित है, और पति का प्रकोष्ठ जिसके स्नेह-राग से रंजित है, घर में समाई हुई, मिट्टी और पत्थर को सजीव करने वाली वह नारी आज कहाँ है ?"

एक सरसरी नज़र

[१]

नारी-हृदय की आवश्यकताएँ

आज स्त्रियों की समस्या को लेकर समाज में एक तूफान, एक तहलका-सा मचा हुआ है। शायद ही कोई पत्रिका ऐसी हो, जिसमें स्त्रियों के लिए स्तंभ सुरक्षित न हो— अब तो साप्ताहिकों और दैनिकों में भी प्रथा चल निकली है। स्कूल-कालेजों, सभा-सोसाइटियों में—सभी जगह—विवाद हो रहे हैं। प्रस्ताव पास किये जा रहे हैं। कौंसिलों में क़ानून बन रहे हैं। सब कुछ हो रहा है, पर यह सारा आन्दोलन, यह सारा बवंडर जीवन की ऊपरी सुविधाओं तक परिमित है, और इसीलिए हम देखते हैं कि इनके कारण स्त्रियों के सच्चे सुख में कोई वृद्धि नहीं हो रही है, न स्त्रियाँ स्त्रीत्व के सच्चे आदर्श की ओर उठ रही हैं। अशान्ति, अनीति बढ़ रही है—संघर्ष बढ़ रहा है, पर सुख के मीठे अमल जल का वह सोता इस मरुभूमि में कहीं दिखाई नहीं पड़ता, जिसकी खोज में सब पागल हो रहे हैं, और जिसके पाये बिना हृदय की प्यास बुझने का कोई चारा नहीं।

हृदय की प्यास कैसे बुझेगी?

इस सारी अशान्ति और तहलके का कारण है, और बहुत छोटा कारण है। हम बातों को बढ़ाना—तूल देना सीख गये हैं। पश्चिम ने हमारे जीवन में एक उद्वेग पैदा कर दिया है, जिसके झोंकों में हमारी दृष्टि और हमारा मन अस्थिर हो रहा

है, और हम ऊपर की बातो को भेदकर नीचे नही पहुँच पाते। हमारी दृष्टि सतह पर रह जाती है। अन्दर, गहराई मे, बात क्या है, यह देखने मे हम असमर्थ रह जाते हैं।

तुम पुरुष की माता हो।

बराबरी के अधिकार के लिए आवाज़ उठने लगी है। वह नारी, जो माता-रूपी खिले हुए फूल की पूर्वावस्था—कली है, पुरुष-रूपी फल से, जिसे उसी ने जन्म दिया है, बराबरी का दावा करने चली है। आज वह भूल गई है कि वह पुरुष की माता है अतः सदा उससे श्रेष्ठ है, और बराबरी के अधिकार की आवाज़ उठाकर खुद अपनी अश्रेष्ठता, अपनी कमज़ोरी का परिचय देने लगी है। इस भ्रमपूर्ण कल्पना ने विभिन्न क्षेत्रो मे अधिकार मिलने की भी आवाज़ उठाई है। यह बुरी बात नही है—स्त्रियाँ कौंसिल की सदस्याएँ बनें, स्त्रियाँ सामाजिक एव सार्वजनिक जीवन-क्षेत्र मे पुरुष के समान ही पदार्पण करे, म्युनिसिपैलटियो, नगर और ज़िला-बोर्डों मे उन्हे स्थान दिया जाय इत्यादि ऐसी मागें है जिनके औचित्य से कोई पुरुष इन्कार नही कर सकता, पर सवाल यह है कि क्या इन माँगो के पूर्ण हो जाने से नारी-हृदय की प्यास बुझ जायगी? इस सवाल का जवाब इसका निर्णय करने के पूर्व नहीं दिया जा सकता कि अधिकार की यह आवाज़ क्यो उठने लगी है, और उसके मूल मे कौन सी मनोवृत्ति काम कर रही है।

विचार करने से और वर्तमान नारी-आन्दोलन के रूप तथा उसे जाग्रत करने वाले उपकरणों पर ध्यान देने से सहज ही मालूम हो जाता है कि इसके मूल में वह प्रतिक्रिया काम कर रही है, जो पुरुषों की अन्यायपूर्ण भावना और क्रूर एवं निष्ठुर व्यवहार ने स्त्रियों में जगादी है। इस आन्दोलन के विकास का कारण नारी-हृदय की वह अशान्ति है, जो पुरुषों के अनुचित व्यवहार से दिन-दिन गहरी होती जाती है।

पुरुषों के दुर्व्यवहार की प्रतिक्रिया

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पुरुष घरेलू जीवन के सदाचार से बहुत गिर गया है। समाज के, राजनीति के क्षेत्र में उसने लम्बे-चौड़े तर्कों, लम्बी स्पीचों और ऊँचे सिद्धान्तों की व्याख्या करने का ठेका ज़रूर ले लिया है, पर घर के अन्दर वह उदासीन, आत्मवंचनापूर्ण और अनुदार भावनाओं और वृत्तियों का अभिनेता है। मैंने अनेक समाज सुधारकों को देखा है, और देश के कई प्रसिद्ध प्रान्तीय और भारतीय नेताओं के साथ भी रहा हूँ। मेरा अनुभव है कि इनमें से बहुत कम का घरेलू जीवन ऐसा है, जिसके बीच शान्त, संयत एवं सुखमय गृहस्थ धर्म पनप सके। या तो उनका अप्राकृतिक अथवा असाधारण विकास हो गया है, और उस तेज़ी की बाढ़ में उनके

यह विस्मृति और आत्मवंचना!

कुटुम्बी उनके साथ चल नहीं सकते हैं। और यों तो शक्ति एवं सत्ता प्राप्त करने की धुन मे उन्होंने अपनी नैतिक दिव्यता को भुला दिया है, और व्यावहारिक राजनीति एवं समाज-नीति के विशेषज्ञ बनने की चिन्ता मे केवल बौद्धिक जीव बन रहे है। शिक्षित समाज की अजब हालत है। हमारी शिक्षा का क्रम कुछ ऐसा है कि वह हमारे अन्दर महत्वाकांक्षाएँ और उद्वेग तो खूब प्रबल कर रहा है, पर उनका शासन करने वाली नैतिक शक्तियो का विकास बिल्कुल रुक गया है। जीवन की बहुत ही अनुभवहीन और कच्ची अवस्था मे युरोपीय नायिकाएँ, किताबो के परदे मे, हमारे साथ हो जाती हैं, और जब एक ओर उनसे हमारा परिचय बढ़ता जाता है—जब मिस रोज़ और जूलियट से हमारी मैत्री हो जाती है, सीता और सावित्री, दमयन्ती और अरुन्धती, मैत्रेयी और मीरा का नाम भी बहुत ही कम अवस्थाओं मे हमारे कानो तक पहुँचता है। फिर जिस प्रलोभन और भोग के युग मे हम रह रहे है, उसमे रह कर हमारा मन इन नवीन वस्तुओ की ओर स्वभावत: दौड़ता है। यह मानव स्वभाव की बहुत बड़ी कमज़ोरी है कि अज्ञात एव रहस्यमय वस्तुओ और व्यक्तियो के प्रति उसमे सहज ही बड़ा आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। इस प्रवृत्ति पर विजय पाने के लिए संस्कार, साधन और साधना की जरूरत पड़ती है, जिसकी ओर न किसी का ध्यान है, न किसी के पास इसके लिए समय है। इसका नतीजा स्वभावत: यह हो रहा है कि गभीर चिन्तन और विचार-

शक्ति की कमी होती जाती है, और उद्वेग एवं भाव प्रवणता की अनियंत्रित वृद्धि हो रही है। जो सुधार किये जाते हैं, या जिन सुधारों के लिए आवाज़ उठाई जाती है, उनको समाज-निर्माण के आवश्यक सिद्धान्तों एवं मूलाधारो पर तौला नही जाता, केवल आवश्यकता और सुविधा, फैशन और वाह्य सुख की कसौटी तक ही उनका दायरा है। मन के प्रवाह की ऐसी डॉवाडोल अवस्था मे राजसिक एवं तामसिक भावनाओं का बढ़ना स्वाभाविक है। सात्विक विचारो पर अंकुश बढ़ाये जा रहे हैं, क्योकि उनसे हमारे असर्यादित भोगो मे वाधा पड़ती है।

समाज-शरीर मे दौड़ने वाली इन रक्त-वाहिनियो और मन मे उठने वाली अस्पष्ट भावनाओ की जॉच करने पर यह सहज ही मालूम हो जाता है कि आज कल के नारी-

स्वाभाविकता नहीं प्रतिक्रिया।

आन्दोलन के अधिकारवाद में प्रतिक्रिया और होड़ का भाव प्रधान है। स्त्रियो की सुख-सुविधा के लिए अधिकारो की आवश्यकता अवश्य है। पर मनोवैज्ञानिक धारा को देखिए, तव आपको मालूम हो जायगा कि माँग इसलिए नही उपस्थित की जा रही है कि उनकी खास जरूरत है या उनके विना स्त्रीत्व का विकास नही हो सकता, वरन् इसलिए कि प्रतिक्रिया की प्रवृत्ति समाज मे पैदा हो गई है। पुरुप कई व्याह कर ले, एक को फूँक कर लौटते ही दूसरे व्याह की वातचीत होने लगे; वहु-विवाह-द्वारा अपना इन्द्रिय

रञ्जन करें, समाज की बहू-बेटियों की ओर लोलुप दृष्टि से देखने की आज़ादी उन्हें रहे, और स्त्रियाँ वैधव्य के ताप से तपें, एक जीवनव्यापी विवाह के मामले में भी उनकी सम्मति की परवा न की जाय! पुरुष बेवफ़ा और कौटुम्बिक सदाचार से गिर कर भी सभामञ्चों पर, कौंसिलों में, नगर और जिला-बोर्डों में डींग मारें, दून की लें, सदाचारशास्त्र और नागरिकता के पवित्र अधिकारों पर व्याख्यानबाज़ी करें, बड़े-बड़े आदर्शों की दुहाई दें, पर स्त्रियाँ अपनी साधारण मानवी आवश्यकताएँ प्रकट करने के अधिकार से भी वंचित रखी जायँ! पुरुष क्लबों में, सिनेमा और नाटकघरों में मनोविनोद और किलोल करें, सिगरेट के धुएँ के बीच अधम वासनाओं के सपनों को लेकर झूलें, 'ह्वाइट हार्स' पर चक्कर काटें और स्त्रियाँ भोली-भाली घर के अन्दर बैठी पति की एकान्त चिन्ता और मंगल कामना में रात-दिन व्यतीत करें। एक तपस्या की आग में जले, दूसरा भोग की धारा में बहता चला जाय! यह कैसे हो सकता है? या तो पुरुष तपस्या करें या स्त्रियों को भी भोग की सुविधाएँ और आज़ादी दी जाय। यह आजकल का तर्क है, और यह आजकल के आंदोलन की भाव-दिशा है!

इसमें सन्देह नहीं कि स्त्री पुरुष के अधिकार अलग-अलग तुलाओं पर नहीं तौले जा सकते। समाज के नैतिक विकास में पुरुष और स्त्री का दर्जा बराबर रखे बिना काम नहीं चल सकता। इसके बिना नीति और

सदाचार की परिभाषा बड़ी संकुचित हो जायगी। शायद उसकी महान् प्रेरणाएँ और व्यापक संदेश रूढ़िवाद मे बदल जायँ, जैसा प्रायः जगत के इतिहास मे हुआ है।

दोनों की समान मर्यादा

सदाचरण कोई संकुचित और टुकड़ों मे बँटा हुआ पदार्थ नही, वह मानव-जीव का समष्टिगत विकास है अतः यदि स्त्रियाँ सदाचारिणी रहे, और पुरुष सदाचार से होली खेलते रहे तो मानवी विकास की गति रुक जायगी। इसीलिए उच्च कोटि के विचारकों एवं नीतिज्ञो की दृष्टि मे जो स्त्री के लिए अपराध है, वह पुरुष के लिए भी अपराध है। पति की अपनी पत्नी के प्रति उतनी ही जिम्मेदारी है, जितनी पत्नी की पति के प्रति है। दोनो को सामाजिक सदाचार का यह बोझ मिलकर उठाना पड़ेगा! यह नहीं हो सकता कि स्त्रियो को बढ़ावा देकर हम अपना बोझ भी उन पर डाल दे, और उनकी तपस्या की आड़ मे गुलछर्रे उड़ायें।

पर ज़रा ठहरिये! अन्याय का प्रतीकार करते समय यह न भूलिए कि समाज-निर्माण और व्यक्ति के विकास मे प्रतिक्रिया से उत्पन्न हुई मनोदशा दूर तक आपका साथ न देगी। वह ज्यादा से ज्यादा इतना करेगी कि पुरुषो को स्थानभ्रष्ट, पद-भ्रष्ट कर दे, उनकी भुजाओ को शक्तिहीन कर डाले, पर वह आपकी प्यास नहीं बुझा सकेगी; आपका और उस पुरुष-वर्ग का, जिससे मिलकर आपको इस जगत मे एक अद्भुत सृष्टि रचनी

है, समुचित निर्माण न कर सकेगी। जिस आधार पर सदाचार की शिला रखी जाती है, जिस नीव पर समाज का सुदृढ़ भवन खड़ा किया जाता है, वह हजारो प्राणियो की जीवन-व्यापी तपस्या और मनन की ईंटो से चुनी जाती है। तिल-तिल गल-कर, खून के छींटे दे-देकर उसे रचा जाता है। रूठने से, अधीर हो जाने से, क्रोध करने से, गालियाँ दे लेने से उत्थान और पतन के विश्व-व्यापी सत्य मे कोई अन्तर नही पड़ता। प्रकृति हमारी तरह भावुक नही है, उसके नियम हमारे मरने-जीने की तुच्छ गाथाओ के परे है। उसके निष्ठुर सत्य मे हमारा गालियाँ देना, रोना और छटपटाना कुछ काम न देगा। जैसे आत्म-निर्माण के लिए बड़ी साधना करनी पड़ती है, वैसे ही समाज और गृहस्थ जीवन की रचना मे भी त्याग करना पड़ता है। जीवन की रचना मज़ाको और चुटकुलो पर नही खड़ी की जा सकती, उसके लिए बड़ी साधना और तपस्या की जरूरत पड़ती है।

एक किन्तु ?

यह एक बड़े दुःख की बात है कि राष्ट्र के इस सक्रान्ति-काल मे, जब सब पदार्थो का मूल्य नये सिरे से आँका जा रहा है, ऐसे विचारक अँगुलियो पर गिन लिये जा सकते है, जो शान्त एव स्थिर-चित्त, चारो ओर देखकर, कारणो को और उनके भावी रूप एव परिणाम को मिला कर, बहुत सोचने के बाद, समाज की जटिल समस्याओ पर अपनी राय

विधायक विचार-शैली का अभाव

प्रकट करते हैं। इसके विरुद्ध समाज में ऐसे 'सुधारक' बहुत हैं, जिन्होंने जोरों से चिल्लाने और विधि-विशेष की हँसी उड़ाने को समाज-निर्माण एवं संस्कार का जरिया बना लिया है। उनके पास जीवन की संस्कृति की कोई ऐसी योजना न मिलेगी, जिसमें वर्तमान दोष न हों। वे समाज में शालीन विचार-बुद्धि, संस्कारशील संयम को बढ़ाने वाली परिस्थिति लाने के लिए कोई खास तरकीब भी न बता सकेंगे, पर समाज के प्रत्येक वर्तमान पहलू पर अपनी चिढ़ प्रकट करने को वे सदा तैयार हैं। वर्तमान समाज-विधि की उनकी आलोचना बड़ी हलकी होती है; उसमें सस्ते जोश का बाहुल्य होता है, विचार का अभाव रहता है। उनकी आलोचनाएँ एक प्रकार के असन्तोष को प्रकट करती हैं, और जिस जीवन-विधि से यह असन्तोष उत्पन्न होता है, उसे तोड़-फोड़ डालना चाहती है, पर इसके आगे उनका भविष्य अन्धकार में है, और रास्ता बन्द है। उसकी जगह कौन-सी जीवन-विधि अच्छी, उपयोगी और कल्याणकर होगी, इस पर या तो उन्होंने विचार नहीं किया, या किया, तो बहुत ही हल्की बुद्धि से।

इस मनोवृत्ति का फल यह हुआ है कि समाज में मर्दुम-शुमारी के लिए सुधारक तो बहुत-से पैदा हो गये हैं, पर

नकली सुधारकों की बाढ़

वस्तुतः सुधार कुछ विशेष हो नहीं पाता है और जो होता है वह भी जीवन के ऊँचे आदर्शों और संस्कारों से प्रेरित होकर नहीं

वरन् व्यक्तिगत सुविधाओं तथा जीवन-सम्बन्धी बहुत स्थूल वासना-रंजन के लिए। रूप और बात एक होते हुए भी मनोवृत्तियाँ भिन्न हो सकती है और मानव-हृदय का विकास मुख्यतः उन्ही पर निर्भर है। दो आदमी एक ही प्रकार देश-सेवा कर सकते हैं जब कि एक की प्रेरणा का आधार सच्चा सेवा-भाव होगा, और दूसरे के अन्दर यश के प्रलोभन नाचते होंगे। रूप एक होते हुए भी इससे बड़ी भिन्नता पैदा होती है। एक कल्याणकर मानवी सदाचरण का संस्कार समाज के अन्दर पैदा करेगा, और दूसरा एक पाखण्ड-प्रलोभनमय जीवन की सृष्टि करेगा।

मानव-जीवन मे कई विभाग है। प्रत्येक विभाग की उत्कण्ठाएँ और महत्वाकांक्षाएँ भिन्न-भिन्न हैं। मनुष्य मे बहुत ही स्थूल शारीरिक प्रेरणाएँ प्रायः प्रबल हो जाया करती हैं, और वह यदि संयम और विवेक से काम न ले तो मानसिक कोमलता और नैतिक क्षमता को प्रायः दबा लेती है। ये शारीरिक प्रेरणाएँ बरसाती नदी की धारा के समान प्रखर होती हैं, और अपनी धकेल ले जाने वाली शक्ति से प्रायः मनुष्य को अशान्त तथा अस्थिरचित्त करके गलत राह पर डाल देती हैं।

आज भी समाज मे जो अनेक धाराएँ चल रही है। उनका सूक्ष्म विश्लेषण करके देखिए। उन पर गौर कीजिए, उनके अन्तराल में पैठिये। मालूम होगा कि स्त्री सुधार की वर्तमान

लहर मे तीन-चौथाई भाग प्रतिक्रियात्मक भावनाओं का है। ऐसा सुधार कल्याणकर न होगा जो हमारे मानसिक स्वास्थ्य से नही, वरं हृदय-रोग से उत्पन्न हुआ हो। सुधार वे ही हो, पर हम यह न भूल जायँ कि समाज के स्वास्थ्य और मनुष्य के विकास एवं सदाचरण के नाम पर उनकी माँग की जा रही है, भोग और वासनारंजन के लिए नहीं।

स्त्री समाज की माता है।

स्त्री समाज की माता है। यह वह निर्झरिणी है, जो दिन हो या रात, दुर्दिन हो या सुदिन, कठिनाइयो की चट्टानों को तोड़ती-फोड़ती वहती ही रहती है, और समाज की तलहटी को सदा हरा-भरा रखती है। माता का जीवन त्याग का जीवन है। वह जहाँ कष्ट का जीवन है, तहाँ महत्त्व का जीवन भी है। आजकल हम सिर्फ कठिनाइयो के बारे मे चिल्लाते और स्त्रियों में बदला लेने की भावनाओ को जगाते है, पर कठिनाइयो का दूसरा पहलू भी है और वह इससे ज्यादा महत्वपूर्ण है। जहाँ स्त्री-जाति का जीवन त्यागपूर्ण, कष्टपूर्ण है, वहाँ वह अधिक महत्वपूर्ण, अधिक आदरणीय भी है। हाँ, यह बात जरूर है कि उन्हें बहुत-सा कष्ट अनिच्छापूर्वक, सामाजिक परिस्थिति के कारण, सहना पड़ता है; वे हर हालत मे स्वेच्छा से कष्ट को अपनाती हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। इसलिए उन बाधाओ को तो दूर करना चाहिए, जो उनके जीवन का सत्त्व, उनकी आशा और उत्साह को

चूस डालती हैं। पर इस संस्कार मे, इस सुधार मे, विचार और विवेक, संयम और सदाचरण के महत्व पर ही ज्यादा ज़ोर देना चाहिए।

इस प्रश्न का दूसरा व्यावहारिक पहलू भी है। और उस दृष्टि से इस पर गभीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। इसके लिए यह देखना चाहिये कि नारी-हृदय की आवश्यकता क्या है, किन बातो से उसे सुख-शान्ति और सुविधा मिल सकती है; क्या करने से उसकी प्यास बुझ सकती है; वे कौनसी बाते है जिनके सहारे उसका आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक विकास हो सकता है, और ये बाते क्या तथा-कथित बराबरी का अधिकार पाने से पूरी हो जायेगी ?

जनन-प्रवृत्ति का महत्त्व

नारी-हृदय के विश्लेषण-कार्य मे उसकी जननप्रवृत्ति (reproductive instinct) का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। केवल मानवी ससार मे ही नहीं, जीव और वनस्पति जगत् मे भी, किसी न किसी रूप मे, जनन प्रवृत्ति का प्राबल्य है। मनुष्य ने अपने विकसित रूप मे इसका विभाजन जरा अच्छे एवं सुविधापूर्ण ढंग पर कर लिया है। यह जनन-प्रवृत्ति प्राणी की सबसे व्यापक एव शक्तिमान उस प्रवृत्ति से जन्म लेती है, जिसे हम लोग वैज्ञानिक भाषा मे 'अपने अस्तित्व की रक्षा का प्राकृतिक क़ानून' (Law of Preservation of Existence) कहते हैं। जगत

की रक्षा और स्वप्रसूत विकास (Automatic Evolution) के लिए वह प्रवृत्ति आवश्यक है। मातृत्व की भावना इसकी मूर्तिमान प्रेरणा है। इसलिए हमारे यहाँ नारी का माता रूप ही सबसे भव्य, पवित्र और कल्याणकारी माना गया है और इसलिए मानसिक, शारीरिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए मानव-जीवन को आश्रमों में बाँटने की व्यवस्था की गई थी।

अब यह मानी हुई बात है कि समाज का उद्भव और विकास नारी और पुरुष के सहयोग से ही हुआ है, और आगे भी सहयोग से ही हो सकता है। यह प्राकृतिक नियम है, और इसे समझने के लिए बहस की जरूरत नहीं। दोनों का पूर्ण विकास और दोनों के जीवन की पूर्ति पारस्परिक सहयोग और आत्म-संयोजन (Fusion of Selves) से ही हो सकती है। नारी-हृदय की प्यास तभी मिट सकती है, जब वह अपने में नारी की सच्ची प्रतिष्ठा करे, और वह नारी की प्रतिष्ठा तभी कर सकता है, जब उसे पुरुष-हृदय का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो। यह एक सूक्ष्म और समझने योग्य आध्यात्मिक सत्य है, क्योंकि यहाँ से ही नारी-हृदय की वह गुत्थी सुलझती या हल होती है, जिसके सुलझे बिना वह अशान्त रही है, और रहेगी।

दो आत्माओं का मिलन

इसलिए नारी-हृदय में आत्मार्पण की स्वाभाविक प्रेरणा

होता है। यह कोमल प्रेरणा उसकी जनन-प्रवृत्ति के विभिन्न रूपों से पैदा होती है। नारी पिता, पुत्र, पति, भाई किसी-न-किसी रूप में पुरुष को आत्मार्पण करने को अपनी आंतरिक प्रेरणा और प्रकृति-द्वारा बाध्य है। पुरुष नारी की इस व्यापक जनन-प्रवृत्ति, आत्मार्पण की इस भावना को व्यावहारिक रूप देने वाला, भाव को क्रिया में बदलने वाला सहायक और साथी है।

इसलिए सब से ज़रूरी बात याद रखने की यह है कि स्त्री-जीवन का उद्देश्य तब तक पूरा नहीं हो सकता, न तब तक स्त्री-हृदय का अभाव पूरा हो सकता है, जब तक वह पुरुष का सहयोग जीवन में न प्राप्त कर ले। यही हाल पुरुष का भी है किन्तु पुरुष-हृदय का संगठन कुछ इस प्रकार का है कि वह स्त्रियों की अपेक्षा कम संवेदन-शील होता है, अतः वह चाहे, तो स्वतंत्र अस्तित्व कुछ समय के लिए रख भी ले, पर नारी बिना आत्मार्पण के अपने को अधूरी अनुभव करती है।

इन बातों का तात्पर्य यह निकलता है कि जीवन की रचना में स्त्री पुरुष सहयोगी हैं, दोनों एक दूसरे के पूरक अंग हैं, दोनों का अस्तित्व न तो व्यक्तिगत जीवन के ऊँचे सुख की दृष्टि से अलग किया जा सकता है, न समाज एवं मानव-जाति के उत्थान के ख्याल से।

इसलिए पुरुष-नारी के बीच, साधारण अवस्था में अधिकार और बराबरी का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता। दोनों मिल

कर एक सम्पूर्ण इकाई की रचना करते हैं; जैसे भिन्न-भिन्न अंगों के मिलने से शरीर बनता है। इसमे यह बहस व्यर्थ है कि कौन छोटा है, कौन बड़ा। हाँ, उपयोगिता की मात्रा मे थोड़ा-बहुत भेद हो सकता है, और मानव-जाति की रचना और प्रगति की दृष्टि से निश्चय ही नारी का स्थान पुरुष से अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि नारी पुरुष की माता है, और जनन-प्रक्रिया मे वह पुरुष की अपेक्षा अधिक कष्ट सहती, अधिक दान करती और अधिक बोझ उठाती है।

एकांगी तरीका

इस प्रकार जब नारी और पुरुष की समाज-निर्माण मे और बहुत करके व्यक्तिगत जीवन मे भी, कोई अलग-अलग महत्व-पूर्ण सत्ता नहीं है; जब दोनो की शक्तियो के समन्वय, योग और संग्रंथन से ही समाज के निरन्तर प्रगति-शील प्राणी की सृष्टि और निर्माण होता है, तब स्वतंत्र व्यक्तित्व और बराबरी के अधिकार का तहलका मचाना न स्त्रियों के लिए कल्याणकारी हो सकता है, न अपने अधिकारो एवं मर्यादा का दुरुपयोग करना पुरुष के लिए लाभदायक है। सवाल तो यह उठना चाहिए कि स्त्रियो की तरह पुरुष को भी आत्मार्पण और आत्म-त्याग की आग अपने अन्दर जलानी चाहिए, जिसे वह अपनी बेवफाई और अधिकार-प्रियता के छींटो से बुझा चुका है। नारी-पुरुष के आदर्श सम्मि-लन मे पुरुषों की गलती से जो खराबी आ गई है, उसे दूर करने का वर्तमान अधिकारवाद का तरीका एकांगी और पंगु

है। वह बहनो को उन अधिकारों से तो सजा देगा जिनके द्वारा पुरुष ने समाज मे अपना एक अप्राकृतिक विशेषतापूर्ण स्थान बना लिया है। सभव है, बहनें उसकी तरह ही उच्छृङ्खल, अधिकार-प्रिय हो जायँ, पर इससे उनकी उस चिरन्तन आग्रह-पूर्ण उत्कण्ठा की प्यास न बुझ सकेगी, जिसके बिना उनका और पुरुषो, दोनो, का जीवन उद्देश्य-हीन और स्वाद-रहित है।

बीच मे जो अनुचित विषमता पैदा हो गई है उसे भरने की ज़रूरत है, न कि बढ़ाने की। इस प्रकार के सुधारक भी यही कहते है कि पुरुषो का होश तब तक ठिकाने नही आ सकता, जब तक स्त्रियाँ भी उन्ही के समान शक्तिमान न हो जायँ। उनका भी उद्देश्य एक है पर उनके साधन ऐसे है, जो उद्देश्य की पूर्ति की जगह बीच की गलतफ़हमी और विरोध की खाई को और बढ़ाते जायँगे। यह तो वैसा ही हुआ कि दो ऐसे मित्रो मे, जो अलग हो ही न सकते हो, एक के रूठने पर दूसरा अकड़ने लगे—"वाह, यही एक रूठने वाले है, हम भी नही बोलते।" इस प्रकार की अकड़ से दोनो का दुःख एवं मानसिक अशान्ति बढ़ती ही जायगी।

स्त्रियो की ओर से माँग तो इस बात की होनी चाहिए कि हमारी तरह पुरुष भी अपने जीवनव्यापी बन्धन के प्रति वफ़ा-दार बनें, हमारी तरह वे भी सम्मिलित संयुक्त जीवन मे आत्मार्पण करें; हमारी तरह वे भी हमारे विवाहित जीवन की ज़िम्मे-

सौदा नहीं, प्रेम !

दारियो और बोझ को प्रेमपूर्वक निवाहे और उठाये; वे भी हमारे सच्चे जीवन-साथी बनें। यह ख्याल ग़लत है कि बराबरी का क़ानूनी अधिकार पा जाने पर ही प्रेम हो सकता है। मै स्त्रियों के बराबरी के कानूनी अधिकार का कट्टर समर्थक हूं पर यहाॅ मै कहना यह चाहता हूॅ कि यह विवाहित जीवन की सफलता की कोई अनिवार्य शर्त्त नहीं है। प्रेम को और उसकी शक्ति को ऐसी शर्तो मे बॉधकर न कभी रखा जा सका, न रखा जा सकता है। यह लेन-देन, सौदा नही है। सौदे मे जो सज्जनता दिखाई जाती है, वह यांत्रिक—बनावटी—होती है। उससे मानव-हृदय के कोमल तन्तुओ का कोई सम्बन्ध नही होता, न इससे उनकी प्यास बुझ सकती है। नारी और पुरुप के जीवन की तुलना राष्ट्रो के जीवन से नही की जा सकती। राष्ट्रों की शक्ति के स्रोत यद्यपि व्यक्ति ही होते है, पर उनकी शासन और संचालन-विधि यांत्रिक नियमो के अधीन रहती है, इसलिए अधिकारो की जरूरत पड़ती है। शासन-संस्था चेतन की अपेक्षा जड़ अधिक होती है, क्योंकि राष्ट्र की स्थूल आवश्यकताओ के नियंत्रण से ही उसका सम्बन्ध होता है। व्यक्ति पूर्ण चेतन की एक इकाई [unit] है। उसका जीवन यांत्रिक नियमो एवं अधिकारो की अपेक्षा आंतरिक प्रेरणाओं एवं मानवी भावो पर अधिक निर्भर करता है। अधिकार और शक्ति से उसके शरीर पर काबू किया जा सकता है, उसका हृदय नहीं जीता जा सकता।

नारी-हृदय की आवश्यकता यह है कि पुरुप का उसे विनम्र,

प्रेममय और व्यापक सहयोग प्राप्त हो। पुरुषो की बेवफाई के कारण उसके जीवन मे जो एक प्रकार की निराशा, एक प्रकार का अभाव, एक प्रकार का सूनापन आ गया है, वह दूर हो। अधिकार और समता लक्ष्य नही, साधन मात्र है। उनके मोह में लक्ष्य को भूलना, उसकी उपेक्षा करना उचित न होगा। माँग पुरुषो के सुधार की होनी चाहिए, न कि पुरुषो की तरह अपने बिगाड़ की। इससे बहनो का देवत्व या श्रेष्ठ मनुष्यत्व और उनकी वह पवित्र आकर्षण-शक्ति नष्ट हो जायगी, जो सम्पूर्ण जगत् के सामने मातृत्व का आदर्श रखती आई है। और उस विभूति को खोकर भी, संभव है, वे पुरुषो को अपने हृदय के नजदीक न ला सकें, और दोनो की अतृप्ति, अशान्ति बढ़ती जाय।

अभी तो जो कुछ हो रहा है, वह एक प्रकार का क्रोध, असन्तोष-प्रदर्शन और प्रतिक्रिया है। यह सुधार का संहारात्मक रूप है; उसके साथ, बल्कि उसकी जगह, रचनात्मक भावो एवं कार्यों को बिठाना चाहिए। मनकी अस्थिर और असन्तुष्ट अवस्था मे जो होता है, वही हो रहा है।* ऐसे समय आदमी

* The great cry of the women is for "Equality of the sexes." I believe that it is, not altogether a fair cry, although I believe it is a natural one—inev itable because of the repression of women, their dominance by men—It is the sex revulsion, and all revulsions

प्रायः बहुत दूर बढ़ जाता है—सीमा लाँघ जाता है, और यह ख्याल नहीं रहता कि हमने किसलिए इसे शुरू किया था।

पुरुष का सतत सहयोग नारी-हृदय की आवश्यकता है; प्रेम उसकी साधना है। इसके बिना नारी मातृत्व के ओज और नारीत्व के मधुर स्वाद से रहित हो जायगी, और अपनी अशान्ति एवं अतृप्ति को बढ़ा लेगी।

---

tend to go too far; they are in fact revolutions, and most revolutions are destructive rather than coustructive.

—The True Ethics of the Sexes, 52.

जो तुम्हे बनना है

[२]

घर की रानी

प्यारी कान्ता,

मैं पहले लिख चुका हूँ कि प्रतिक्रिया जब आती है तब इतने ज़ोर से आती है कि सोचने-समझने और मनन करने का अवसर नही देती। वर्षा की हरहराती नदी के समान, वह कूलो और कछारों को तोड़ती, वृक्षो को गिराती चलती है। उसके तोड़ में जहाँ जो कुछ अस्वाभाविक और अनीति-मूलक होता है, बह जाता है, तहाँ जो कुछ वाञ्छनीय एवं श्रेयस्कर है, वह भी समाप्त हो जाता है।

संसार के अधिकांश विद्रोहपूर्ण आन्दोलन परिस्थितियो की प्रतिक्रिया के परिणाम-स्वरूप ही उठते है। इसीलिए उनमे क्रोध और हिंसा का भाव प्रधान रहता है। जोश और उच्छृंखल उत्साह उनका नेतृत्व करते है। उनमे विवेचन का, विवेक का प्राधान्य नहीं होता, वरन् प्रतिक्रिया के कारण उत्पन्न भावो की बाढ़-मात्र रहती है। इसीलिए इनसे जहाँ ध्वस होता है, वहाँ निर्माण बहुत कम हो पाता है।

अनादि काल से नारी मनुष्यता के इतिहास की प्रधान नायिका है। उसको लेकर राष्ट्र उठे हैं और गिरे हैं; उसके आगे-पीछे धर्मों का अभ्युदय और पतन

स्वतंत्रता की पुकार

हुआ है; उसके साथ मानवता हँसी और रोई है और साहित्य उसको पाकर धन्य

हुआ है और दलदल मे भी गिरा है। मकड़ी के जाले की भाँति विश्व का इतिहास नारी के केन्द्र-विन्दु के चारो ओर फैलता और सिकुड़ता रहा है। आज भी नारी को लेकर ससार मे एक आन्दोलन, एक हलचल है। आज पुरुप नारी को वन्धन-मुक्त कर देने को उतावला है। प्रत्येक देश, समाज, प्रान्त, जाति मे नारी की स्वतन्त्रता की माँग है। पर जैसा कि पुरुप ने सदा किया है, यह स्वतन्त्रता का आन्दोलन उठाकर उसने नारी को पहले से भी अधिक गुलाम और अर्धी वना दिया है। आज नारी को पुरुप अपने मार्ग पर चलाना चाहता है; आज पुरुष ने स्वतन्त्रता के नाम पर उसका नेतृत्व अपने हाथ मे ले लिया है और आज नारी ज़रा-से नशे मे अपनी मर्यादा, अपने मातृत्व का महान गौरव भूल चली है। अधिकार! कैसा मोहक, मायावी, जाल मे फँसाने और नशे मे विस्मृत कर देने वाला शब्द है यह! यह वह अस्त्र है जिसे पुरुप ने नारी को अचेत और विस्मृत करने के लिए छोड़ा है। और जिसको पाकर नारी मोहाविष्ट और निद्रालु हो चली है!

मै जानता हूँ, मेरे ये विचार पढ़कर वहुत से पुरुप चौकेगे। उनका चौकना मै स्वाभाविक मानता हूँ। उन्होने नारी को सदा भोग की सामग्री के रूप मे देखा है और आज प्राचीनो के विरोध के नाम पर भी वे दुःखिता, पीड़िता नारी की मानसिक अवस्था का लाभ उठाकर उसे मनोरञ्जन की, शृंगार की, अपनी तृप्ति की

नारी को रमणी वनाने का प्रयत्न

चीज़ बनाना चाहते हैं ! आज विश्व मे नारी सुधार के नाम पर जो कुछ हो रहा है उसका अधिकांश *नारी* को *रमणी* बनाने का एक प्रयत्न मात्र है। पर जहाँ रमणी रूप अधिक आकर्षक, अधिक चञ्चल, अधिक आकस्मिकता से क्षुब्ध जनों को अन्धा करने वाला है, तहाँ स्वयं नारी के सम्मान के अन्त का बीज भी उसी मे छिपा है। जहाँ नारी का रमणी-रूप प्रधान है तहाँ अन्त मे नारी की ही हानि है;—तहाँ वह दो क्षण के मनोरञ्जन की चीज़-भर है।

अजीब लहर

जब एक प्रवाह चलता है तो उसे चीर कर उठना प्राय: असम्भव हो उठता है। कुछ अशक्ति के कारण, कुछ फैशन एवं ज़माने की रफ्तार के कारण, कुछ परिस्थिति के कारण, कुछ अपना निजी कुछ विचार न होने कारण और कुछ 'जो होना होगा होगा क्य व्यर्थ चिन्ता की जाय' इस 'अजगर करे न चाकरी' वाली वृत्ति के कारण समय के प्रवाह के आगे सिर झुका देते है। आज भी दुनिया मे नारी-जागरण के नाम पर जो कुछ हो रहा है उसके मूल मे कुछ इसी तरह के भाव काम कर रहे है। आज, इस गति एवं अतृप्ति के युग मे, जब मानव-अंतःकरण एक प्रकार की खीझ एव प्यास से विकल है, किसी के पास इतना समय नही कि वह दो क्षण ठहर कर सोच ले कि मै कहाँ जा रहा हूं। आज तो गति, न कि लक्ष्य, मनुष्य के जीवन मे केन्द्रित है। नारी भी इस गति का शिकार हुई है। उसे भी कुछ चाहिए !

पुरुप अस्थिर, अतृप्त, अस्त-व्यस्त और गतिमान है तो वह क्यो न हो ? उसे भी गति का आनन्द, उसके झोको एवं आँधियो मे गिरने और उड़ने का स्वाद क्यो न लेने दिया जाय ?

आज संसार के अधिकांश आन्दोलन क्षुब्ध एव पीड़ित, असन्तुष्ट एव अतृप्त मानव-हृदय के उद्गार है। इसीलिए उनमें प्रेम का नही, अधिकार का स्वर है। नारी आन्दोलन मे भी वही हुआ है। आज नारी को भी समता चाहिए, अधिकार चाहिए।

प्रेम बनाम अधिकार

विल्कुल उचित माँग है। कोई उल्टी खोपड़ी का और विकृत-हृदय व्यक्ति ही इसका विरोध करेगा। पर यह नारी अपने से पूछना भूल चली है कि क्या उसे स्नेह भी चाहिए, प्रेम भी चाहिए! अधिकार और समता तो अच्छी चीजें है पर इनका भी कुछ उपयोग और उद्देश्य है और इनको प्राप्त करने के भी मार्ग और साधन है। क्या यह अधिकार पुरुष की प्रतिद्वन्द्विता से ही प्राप्त हो सकता है ?

सच पूछिए तो नारी और पुरुष की समस्याएँ एक दूसरे से अभिन्न है। इन पर दो-दो चार के फारमूला की भाँति विचार नही किया जा सकता। नारी के और पुरुष के प्रश्नो पर बिल्कुल स्वतंत्र रूप से अलग-अलग विचार नहीं हो सकता।

होड़ नही सहयोग !

अनादिकाल से नारी और पुरुप दोनो ने अपना सम्मिलित मार्ग बनाया है और दोनो का समाज मे संयुक्त स्थान, उपयोगिता

और महत्व है। दोनो का जीवन, दोनों का उत्थान और भविष्य एक-दूसरे पर आश्रित हैं। इसलिए समाज की रचना एवं उसके विकास और भविष्य का विचार करते समय इनके टुकड़े नहीं किये जा सकते। दोनो के स्वभाव, प्रकृति, देन एवं जीवन-दृष्टि मे भेद होते हुए भी दोनो एक दूसरे के पूरक और सहायक हैं; प्रतिद्वन्द्वी नहीं। नारी-समस्या पर या पुरुष-समस्या पर विचार करते समय कभी भूलना न होगा कि दो मे से कोई दूसरे का वहिष्कार करके नहीं चल सकता; दोनो को एक-दूसरे का आश्रय जीवन मे लेना ही पड़ेगा।

तब नारी की आवश्यकताएँ क्या हैं ?

एक सम्मानपूर्ण, और उससे भी अधिक एक प्रेमपूर्ण, कर्तव्यपूर्ण जीवन। जीवन की सुविधाएँ और जीवन का सच्चा आनन्द। समाज को श्रेष्ठ संतति देने के गौरव की स्वीकृति। जीवन की भौतिक सुविधाएँ।

जिसे भी उचित रीति से समाज के निर्माण की चिन्ता है वह नारी को यह सब अधिकार और सुविधाएं देने का समर्थन अवश्य करेगा। समाज उसे अपाहिज रख-पुरुष का अन्धानुकरण कर देर तक खड़ा नहीं रह सकता। स्वयं पुरुष स्वस्थ नारी के विना अशक्त है। समाज-निर्माण के किसी भी कार्य-क्रम मे तब तक सफलता नहीं मिल सकती जब तक दोनो को विकास की सुविधाएँ न प्राप्त हो।

इसलिए मानव-समाज के श्रेष्ठ स्वार्थों के नाम पर नारी को अधिक से अधिक सुविधाएँ मिलनी चाहिएँ। पर सुविधाएँ किस बात की? इस बात की कि जैसे पुरुष सच्चे पुरुष बनें, वैसे ही नारियाँ सच्ची नारियाँ बने। अधिकार और समता का यही एक सदुपयोग हो सकता है। पर आज तो नारी पुरुष बनने के लिए विकल है और निश्चय ही उसकी इस मनोवृत्ति मे लघुता की अनुभूति का भाव [inferiority complex] है। पुरुष के अज्ञान से अथवा परिस्थिति के कारण वर्तमान काल मे नारी की जो दशा है उसमे उसने भ्रमवश यह समझ लिया है कि पुरुप नारी से श्रेष्ठ है। इसलिए आज वह पुरुप का अनुकरण करना चाहती है। जो कुछ पुरुप करे, वह स्त्री क्यो न करे—आज के नारी-जागरण का यह स्वर है। पर इस स्वर को अपना कर नारी ने अनायास अपने को लघुता प्रदान की है। आज नारी प्रत्येक बात मे,—धूम्रपान एवं मदिरापान से लेकर कार्यालयो मे कुर्सियाँ तोड़ने तक प्रत्येक बात मे,—पुरुप क्यो बनना चाहती है? क्या पुरुष उससे श्रेष्ठ है? श्रेष्ठ तो नहीं था पर अपनी कल्पना एव अधिकार के नशे मे भूलती नारी ने, अप्रत्यक्ष रूप से, उसे श्रेष्ठ मान लिया है, यद्यपि ज़बान से वह पुरुष की भरपेट निन्दा करने और उसकी बराबरी का दावा करने को तैयार है। आज नारी-जागरण के इस क्षेत्र मे पुरुप नारी का नेतृत्व कर रहा है या यो कहे तो ज्यादा अच्छा होगा कि भ्रमवश नारी पुरुष का अन्धानुसरण कर रही है। यद्यपि मुँह से

कहती जाती है कि मैं तुमसे किस वात मे कम हूँ। यह एक आश्चर्यजनक सत्य है कि जिस रूप मे अधिकार का यह आन्दोलन हुआ है उससे नारी-स्वतन्त्रता घटी है, वढ़ी नही। उसने नारी के विशेप व्यक्तित्व का विकास नहीं होने दिया वरं नारी में पुरुप को पैदा किया और वढ़ाया है। पुरुष का एक नमूना—एक माडेल—वना कर नारी उसका हर क्षेत्र मे अनुकरण करना चाहती है।

इसका परिणाम यह हुआ है कि समाज मे नारी की स्वतंत्र प्रतिभा की जो ज्योति फैलनी चाहिए थी, वह टिमटिमा कर वुझती जाती है। व्यक्तित्व के स्वतंत्र विकास

नारी का सच्चा गौरव की जगह एक प्रकार का अवाञ्छनीय मिश्रण हो रहा है; एक प्रकार की संकरता फैल रही है

इसने गृहस्थ जीवन को कुचलकर अधमरा कर दिया है। नारी भी अतृप्त है, पुरुष भी असन्तुष्ट है। उलटे विचारो के प्रचार के कारण वहुत-से लोगों ने इस अतृप्ति को ही 'क्रांति' समझ लिया है और जैसे वहुत वड़ी मंजिल मार ली हो, इसका ढिंढोरा पीटते हैं और खुश होते हैं। परन्तु इस शोर-गुल मे असली वात तो ज्यो की त्यों रह गई है और वह तव तक हल नहीं हो सकती जव तक इन समस्याओ के निर्णय की पहली कसौटी यह न हो कि स्त्री-पुरुप को एकत्र रहना है एकत्र सृष्टि करनी है, एकत्र विकास करना है; जव, तक दोनो के सम्वन्ध मे अधिकार की जगह, अथवा ये शब्द न अच्छे लगे, 'अफेंसिव' हो तो यो कहा जाय

।

देने मे ही आनन्द है ।

कि अधिकार की अपेक्षा आत्मार्पण का, प्रेम का, सहानुभूति, परस्परावलम्बन और कर्तव्य का भाव प्रधान न हो। मानव-समाज की सृष्टि ही इसी आधार पर हुई है। जीवन तो समझौतो की एक माला है। नारी-जीवन तभी सुखी एव तृप्त हो सकता है जब आत्मार्पण मे वह अपने व्यक्तित्व को खोजे, पावे और प्रकाशित करे। पुरुप के लिए भी यही वात है पर स्त्री के लिए तो वह ध्रुवतारा-सा है। नारी का सम्पूर्ण जीवन ही त्यागमय है। इस देने मे ही उसका आनन्द है। इसी मे उसके मातृत्व का, पुरुष की माता होने का गौरव सुरक्षित है। यहीं उसकी आत्मा' का प्रकर्ष है। यही नारी वह है जो पुरुप नही है; न हो सकेगा।

इसलिए सहयोग, न कि प्रतिद्वन्द्विता और होड़ का भाव, स्त्री-पुरुप के समुचित जीवन के निर्माण की नीव मे होना चाहिए। आज जो लोग समाज मे दोनो के वीच एक प्रतिक्रिया-त्मक होड़ चलाना चाहते है, वे समाज की हानि कर रहे है और समाज की हानि चाहे न भी कर रहे हो पर स्त्रियो को भारी क्षति पहुॅचा रहे है। मेरा मतलव यह है कि वे नारी मे कुछ इस तरह की भावना पैदा कर रहे है कि पुरुप अमुक काम करता है तो स्त्री क्यो न करे। किसी काम को करने की कसौटी यह नहीं रह गई है कि वह काम कैसा है—अच्छा है या बुरा, वल्कि यह कि पुरुप उसे करता है या नही। यह ठीक उसी प्रकार का तर्क है कि अमुक वड़े कहला कर भी वुरे आचरण के है या

नहीं ! 'अच्छा है तो ? तो क्या इसी हेतु हमारे लिए भी बुरा आचरण वांछनीय है ? नारी का ओज और नारी का त्याग, जिसकी समता पूर्व समय का औसत पुरुष नहीं कर सकता था, आज हमारे भ्रमात्मक प्रचार-विष के कारण नारी को खलने लगा है; आज तो उसकी कुछ ऐसी मनःस्थिति है कि पुरुष तो स्वार्थी है, बेवफा है और हमने तो सदा त्याग किया, अब कब-तक त्याग करती रहें ? इसलिए ? उस त्याग को छोड़कर हम भी उनकी कोटि में क्यों न आ जायँ ?

दाम्पत्य सुख का रहस्य

आज 'सुधरी' हुई स्त्रियाँ अपनी ओर, अपने गौरव की ओर नहीं देखती हैं। आज उनका सारा ध्यान पुरुष की ओर है—उसकी नकल करने में वे अपनी सफ-लता मानती हैं। उनकी दशा उस ईर्ष्यालु पत्नी की तरह है जो अपने पति का प्रेम न पाकर असन्तुष्ट और अतृप्त है और पति की प्रत्येक भली-बुरी गति-विधि पर दृष्टि रखने में ही उसका सारा समय जाता है। अत्यन्त व्यथाकारी फोड़ा जैसे रोगी का ध्यान अपनी तरफ से ज़रा भी दूर नहीं होने देता वैसे ही पुरुष ने उसका ध्यान अपने में केन्द्रित कर लिया है। फलतः वह अपने व्यक्तित्व का निर्माण ही नहीं कर पाती। उसका हृदय जल रहा है और वह सोचती है कि वे स्वच्छन्द होकर घूमते हैं, फिर मैं दासी बनी उनके भरोसे कब तक बैठी रहूँ ? इसी अवस्था में रहने वाली दूसरी श्रेष्ठ विचारों वाली पत्नी,

पति के पतन से अपने को प्रभावित न होते हुए उलटे अपने को बहुत ऊँचा उठा लेती है। उसकी विचार-धारा कुछ इस प्रकार चलती है कि मेरा धर्म तो अपने मन को पवित्र रखना है और मेरा काम इनके प्रति अपना कर्तव्य पालन करना है। इससे न केवल पत्नी का आत्म-विकास होता है वरन् पहले प्रकार की गर्वीली स्त्री गृह-जीवन को और अपने जीवन को सुखी करने की जिस चेष्टा मे असफल होती है, दूसरी श्रेणी की स्त्री के उसमे भी सफल होने की आशा रहती है। प्रायः इस त्याग, सेवा और कर्तव्य-पालन के कारण, किसी मनोवैज्ञानिक क्षण मे, जब निराशा और अनुताप का भाव मन मे प्रबल हो, पति का जीवन एक दम बदल जाता है। मै ऐसी अनेक घटनाएँ जानता हूँ, जब पत्नी की वफादारी और कर्तव्यशीलता ने मिटते हुए एवं निरानन्द गृह-जीवन को फिर आनन्द और उल्लास से भर दिया है और पतन के गर्त्त मे गिरते हुए पति को ऊँचा उठाया है, जब ऐसा एक भी उदाहरण मेरे सामने नहीं जब पत्नी की समानता के, अधिकार के, होड के आचरण से गृह-जीवन का सुख एवं शान्ति बढ़ाने से, अथवा पति-पत्नी के टूटते हुए सम्बन्ध को सँभाल लेने मे सफलता प्राप्त हुई हो। इसके विपरीत भारत की कई प्रसिद्ध नारियों को मै जानता हूँ जो दोनो ओर से चलने वाली इस प्रकार की खीचातानी के परिणाम-स्वरूप दुखी और अतृप्त है; सारी प्रसिद्धि को लेकर भी उनका हृदय प्यास से भरा है और आत्मा छटपटा रही है। बात यह

है कि दाम्पत्य-जीवन के सुख की एक अलग कला है और उसकी नींव इस बात पर है कि पति-पत्नी दोनो में एक दूसरे के दोष-दर्शन की जगह एक-दूसरे को सँभाल लेने की वृत्ति हो। यदि पत्नी में नहीं है तो पति को और पति मे नहीं है तो भी पत्नी को यही उदारता और त्याग का भाव रखना चाहिए, तभी दाम्पत्य जीवन सफल, सुखी और ऊँचा हो सकता है।

गृह का महत्व

दूसरी बात यह कि आजकल स्त्रियो के नाम पर अथवा उनकी बराबरी के नाम पर जितने ज़हर समाज मे फैलाये जा रहे है और जिन्होने पुरुष एवं स्त्री के सम्बन्ध को मृदु एवं प्रेममय बनाने के स्थान पर दोनों के बीच की खाईं को और गहरा कर दिया है, उनमें एक यह भी है कि स्त्रियों के ऊपर घरेलू जिम्मेदारियाँ लादकर पुरुष ने उनके आगे बढ़ने का मार्ग रोक दिया है। पर 'आगे बढ़ने' का अर्थ क्या है! कदाचित् कौंसिलों मे जाना, अखबारो मे लेख लिखना। सभा-सम्मेलनो एवं संस्थाओ की अध्यक्षता, आफिसो मे काम करना आदि! निश्चय ही ये बुरी बातें नहीं हैं और इनके दरवाज़े भी सबके लिए खुले होने चाहिएँ पर प्रश्न यह है कि क्या इनसे व्यक्ति अधिक विकसित हो जाता है? क्या उसकी आत्मा ऊँची हो जाती है? क्या उसके मानस का विकास होता है और क्या गृह-जीवन से ये अधिक महत्व की चीज़ें हैं?

समाज के निर्माण में गृह-जीवन का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। इसी नींव पर समाज एव संस्कृति का सारा ढाँचा खड़ा है। किसी राष्ट्र के गृह-जीवन से उसकी सभ्यता, उसके वास्तविक सुख और उसकी अन्तःशक्ति का अन्दाज लगाया जा सकता है। यह वह स्थान है, जहाँ राष्ट्र पलता और बढ़ता है। यह राष्ट्र के भविष्य की, समाज की शक्ति की नर्सरी है। यहीं की मिट्टी में और यहीं के खाद से राष्ट्र की जीवन-शक्ति का पौधा अपना भोजन और अपनी पुष्टि पाता है। समाज को जिस रूप मे चाहे ढाल लेने की यह 'फाउण्ड्री' है।

फिर यह आश्चर्य की बात है कि समाज-शक्ति के सबसे आवश्यक एवं शक्तिमान विभाग को अपने हाथ मे पाकर भी शिक्षित स्त्रियाँ उसे जेलखाना और कैद के नाम से पुकारे और वे पुरुष, जिनके पास विचार तो नही है पर जो कुछ बहाव मे बहने के कारण और कुछ अपनी प्रचार-वृत्ति के कारण, स्त्रियो के आगे आकर खड़े हो गये है और उनको रास्ता दिखाने के नाम पर और आगे ले जाने के मद मे उन्हे खाइयो की ओर ले जाना चाहते हैं, जेलखाना और कैद-जैसे नामो से स्त्रियो को डरावें और उनकी निम्नवृत्तियो को जाग्रत करें। इस गृह-जीवन की अधिकारिणी होकर जिस नारी को समाज-शक्ति की कुञ्जी अपने हाथ मे रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ हो, वह उससे दूर भागकर अशक्त और दुर्बल क्यो बनना चाहती है? क्या वह चाहती है कि माता का सन्तति के ऊपर पिता से कहीं अधिक जो

प्रभाव होता है, उसे वह खोदे? यह नीचे गिरना है या ऊपर उठना है?

पर असल वात तो यह है कि वर्तमान सभ्यता जहाँ हमें अधिकार का पाठ पढ़ाती है वहाँ उस अधिकार के साथ लगी हुई ज़िम्मेदारियों का वोझ उठाने की ओर हमें प्रवृत्त नहीं करती। शक्ति के साथ, गौरव के साथ सदा कष्ट और दुःख रहेंगे। यह नहीं हो सकता कि हम अधिकार और शक्ति तो चाहे परन्तु उसके लिए कठिनाइयाँ सहने और त्याग करने को तैयार न रहे। भारतीय गृह में नारी को जो अपूर्व अधिकार मिला था, वह उसने अपने त्याग, कष्ट-सहन, और कठिनाइयो और वाधाओं के वीच उठने की अपनी क्षमता के कारण ही प्राप्त किया था। आज की सभ्यता की गति भोग एवं विलास की ओर है इसलिए अधिकार तो सब चाहते है पर उस अधिकार के लिए त्याग करने को कोई तैयार नहीं।

घर की रानी

गृह तो वहनो की शक्ति का स्रोत है। यहाँ समाज की माता एवं कुटुम्ब की अन्नपूर्णा के रूप मे उसके दर्शन होते है। यहाँ वह उस महिमा से महिमामयी है जो आत्मार्पण एवं त्याग मे मूर्तिमान होती है। जहाँ भी समाज को शक्तिमान और सुदृढ़ बनाने का आयोजन होता है वहाँ इस गृह-जीवन का निर्माण सबसे पहले करना पड़ता है। नारी का प्रकर्ष गृह में है। संसार

के महान् पुरुषो की सफलता का रहस्य इसी गृह-जीवन मे मिलने वाली उनकी शिक्षा एवं संस्कारो मे छिपा है।

माता का अंचल

युग के प्रवाह मे अप्राकृतिक तत्त्वो की जो तीव्र धारा है उसने गृह-जीवन की जड़ को हिला दिया है। इसीलिए, इस गृह-जीवन के अशक्त एवं दुर्बल हो जाने के कारण, आज का युवक परमुखापेक्षी, परिस्थितियो के आगे झुक जानेवाला, कठिनाइयो के बीच रो देने वाला, चिड़चिड़ा और असंयमशील हो गया है। वह बोलता बहुत है, चाहता अधिक है, पर करता कम है, और देना, त्याग करना चाहता नहीं। यह दुर्भाग्य की बात है कि उन पर से उस माता का अंचल हटता जा रहा है जिसकी छाया मे पलकर और जिसके त्याग का दूध पीकर वे शक्तिमान होते थे। गंगा की भाँति समाज को सतत नारी के मातृ रूप ने शक्ति का, जीवन का, सर्वश्रेष्ठ संतति का दान किया है। उसके इस कार्य की तुलना और किस कार्य से हो सकती थी? उसकी छाती का अमृत पीकर समाज के बच्चे उठते थे। यह उसी का गौरव था और आज भी भारतीय गृह मे थोड़ा बहुत जो सौख्य एवं सौन्दर्य सुरक्षित है वह भी उन्ही बहनो और बेटियो, पत्नियो और माताओ के कारण है, जिनका त्याग प्लेटफार्मों पर नही बोलता, बल्कि बच्चे के जीवन मे अंकुरित होता और पनपता है, जो अधिकार की नही, प्रेम की भूखी हैं— उस प्रेम की जिससे बढ़कर कोई अधिकार नही।

इसीलिए मैं तुमसे तथा अपनी उन बहनों से, जिनमे त्याग और संस्कार की लौ है, कहता रहा हूँ और आज भी सम्पूर्ण विनय और प्रेम से कहना चाहता हूँ कि तुम्हारा सच्चा स्थान गृह ही है। मेरी आशा हिन्दू-गृह की उन हजारो और लाखों बहनो से है जिनमे बिना किसी प्रतिदान को आशा के भी त्याग की ज्योति जल रही है; जिनको पाकर हमारा समाज धन्य है और जिनके आत्मार्पण और आत्मोत्सर्ग के ही कारण गिरे हुए और भूले हुए पुरुषो का तथा इस प्रकार टूटने एवं उखड़ते हुए गृह एव दाम्पत्य जीवन का पुनरुद्धार संभव है।

साधना खण्डः समस्यायें और हल

[३]

रोज़ का घरेलू जीवन

—दो चित्र—

प्यारी कान्ता,

गृहस्थ-जीवन बड़ा जटिल होता है। सहानुभूति और प्रेम के होते हुए भी अक्सर स्वभाव-वश लोग इसमे असफल होते हैं। इस सम्बन्ध मे आज दो चित्र मै तुम्हारे सामने रखना चाहता हूँ जिससे बहुतेरी उलझनें स्पष्ट हो जायँगी।

मध्यम श्रेणी का एक घर। विश्वनाथ गृह-स्वामी है। लक्ष्मी गृहणी; बिल्कुल अपढ़ भी नही है, हिन्दी मिडिल तक पढ़ी-लिखी है। सीना-पिरोना जानती है। घर के काम-काज में मन लगता है। विश्वनाथ बी० ए० तक पढ़ा, औसत दर्जे की बुद्धि रखने वाला, जीवन के युद्ध का एक लाचार सैनिक। कोई खास लक्ष्य उसके सामने नही। किसी सरकारी आफिस मे नौकर है। पैसठ रुपये कमा लाता है जो आजकल के ज़माने मे कुछ मामूली काम नहीं—और पतियो के लिए इससे ज़रूरी और काम भी क्या है! एक नौकर है। घर चलता है; कोई खास रुकावट नहीं। यह भी नही कि विश्वनाथ की आँखो मे कोई दूसरी औरत हो, वैसी आकांक्षाएँ केवल रोमैण्टिक कहानियों के नायकों की विरासत मे आई है। मामूली आदमी इतनी उड़ान क्योंकर भरे। उसे अपने बाल-बच्चो और पेट से फुर्सत कब मिल पाती है। दिन कमाने मे और रात खाने या खाना बनाने वाली की सेवा मे। बस, एक साँचे का जीवन, जो कुछ

सोचने और समझने की फ़ुर्सत नहीं देता। और चूँकि सोचने-समझने की फ़ुर्सत नहीं देता, इसीलिए निभ रहा है।

अभी विश्वनाथ ज़िन्दगी में ज़रा सुभीते से लग पाया था और सन्तोष की शायद आधी ही साँस उसने ली हो कि पन्द्रह साल की कुमारी पुत्री सुशीला उसके सामने आकर खड़ी हो गई है। अमृत-सा उसका सौन्दर्य मानो विश्वनाथ और उससे भी ज़्यादा लक्ष्मी, और सब से ज़्यादा सगे-सम्बन्धियों और पड़ोसी महिलाओं के लिए ज़हर फैलाता और लुटाता आया है। छाती पर साँप लोट रहा है! लड़की कब किसकी हुई है! वह तो परायी थाती है। विश्वनाथ खाता-पीता ज़रूर है पर बचत कुछ ऐसी नहीं कि सुशीला उसके लिए कोई समस्या न उपस्थित करती हो। बाज़ार में पतियों की कुछ कमी नहीं, पर दाम चढ़ा हुआ है! पैसे अच्छे दीजिए, एक क्या दस लड़के तैयार हैं। तब पैसे कहाँ से लाये?

परायी थाती

पर बार-बार लक्ष्मी कह चुकी है—जैसे हो लड़की को पार तो लगाना ही पड़ेगा। मैं अपने लिए तो नहीं कहती? मेरी तो जैसी बीत रही है, बीत रही है। पर इतनी बड़ी लड़की को कब तक घर में बिठाओगे? लोग अँगुली उठाते हैं। मौसी आई थीं, बुआ आई थीं, यह आई थी, वह आई थीं। कहती थीं कि तुम लोगों के गले घूँट कैसे उतरती है? और बात भी सच

हैं। सुशीला काफी सयानी हो गई है। कुछ डौल करना ही पड़ेगा।

बात तो सच है। कुछ डौल भी करना ही पड़ेगा पर कैसे यह डौल होगा। खैर; चूँकि डौल करना ही पड़ेगा और बात सच है इसलिए कर्ज का बन्दोबस्त करने और लड़का खोजने मे आज पन्द्रह दिन से विश्वनाथ परीशान है।

आज सुवह नौ बजे इसी सिलसिले मे उसे कहीं मिलने बुलाया गया है। विश्वनाथ उधर से ही आफिस चला जायगा, इसलिए खाने की जल्दी है। उधर एक बच्चे की आँखें उठ आई है और वह रो-रो कर घर सिर पर उठा रहा है। खुद लक्ष्मी की तबीयत भी खराब है। राम-राम करके खाना तैयार हुआ तब पौने नौ हो रहे थे। आज विश्वनाथ ने जल्दी के लिए चाय भी न पी थी। रात-दिन की परीशानी, अब यह देर उसे खिझाने को काफी थी। पर वह दिल को उभरने न दे रहा था। अपने को मारे और दबाये हुए थाली पर बैठा। पहला ग्रास। अरे! नमक इतना कि खाना जहर हो गया। मुँह से निकल जाता है:—"आजकल किसी नशे मे रहती हो क्या ?"

चुभने वाला एक व्यङ्ग

लक्ष्मी, थकी-हारी, खीझ उठी। चुप रह कर बात खतम करने की कोशिश की पर चुप रहा नहीं गया। जिस मानसिक स्थिति में वह थी उसमे यह व्यङ्ग! नशा करती है? नशा वह क्या करेगी? किस बूते पर नशे मे होगी! नशा लायक जो कुछ

उसके पास था, सब एक-एक करके वह दे चुकी है अब कुछ नहीं रह गया है तब नशे की बात उसके सारे शरीर मे जहर की भाँति फैल गई। न बोलना चाहते हुए भी वह कहती है:—"हाँ, तुमने मुझे नशे के लायक रखा ही है न! मजदूरनी से भी गये-गुज़रे दिन बीत रहे है। मुझे क्या नशा होगा? नशा तो तुम्हे होगा, तुम कमाते हो। मेरे पास क्या है? लौंडी किस बिरते पर नशा करेगी?"

अदृश्य छिद्र

कभी-कभी ऐसा होता है कि आसमान बिल्कुल साफ है। निखरी और इठलाती हुई चाँदनी है कि देखते-देखते बादल घिर आते है और अँधेरा हो जाता है। जिन्दगी में भी ऐसा ही होता है। जब हम सुख की कल्पना मे ज़मीन-आसमान के कुलाबे मिला रहे होते है तभी मानो हमारी सारी आशाओं-आकांक्षाओ को कुचल कर दिल को हिला देने वाला अंधकार घिर आता है। जहाँ क्षण-भर पहले दिल हँस रहे थे और आँखें नाच रही थी तहाँ जीवन के अदृश्य छिद्रो से रोदन और पीड़ा की बरसात होने लगती है। अभी दस मिनट पहले विश्वनाथ कैसी उमंग मे था और लक्ष्मी ने हजार निराशाएँ होते हुए भी जल्दी-जल्दी और उत्साह से सब काम करने की कोशिश की। पर उनके सब उमगो पर दुर्भाग्य ने क्षण भर में पानी फेर दिया!

लक्ष्मी की बात ने बात बढ़ा दी ! विश्वनाथ बोला—"मैने तुम्हारे लिए क्या नही किया ? रात-दिन के इतने झगड़े मे क्यो पालता हूं ? क्या अपने लिए ? और तुम ज़बान चलाती जाती हो। गलती करना और उस पर ये ज़हरभरी बाते ! मै तो तुम्हारी लड़की के लिए परीशान और तुम्हारा दिमाग़ आसमान पर है !"

लक्ष्मी चाहती है कि न बोलें पर कैसे न बोले—"मेरे लिए तुमने कुछ नही किया। किया होगा अपने आराम के लिए ! किया होगा अपने बच्चो के लिए ! मेरे लिए क्या ? जब से आई, तुम्हारी गृहस्थी मे जान खपा रही हूं। माँ-बाप का घर छूट गया; भाई-बहन सब सपने है ! किसी का मुँह नही देख पाती हूं फिर भी रात-दिन का जलाना !"

बेकाबू ज़बान

और गुस्से में विश्वनाथ थाली फेंक देता है। कहता है:—"माँ-बाप ! माँ-बाप ! माँ-बाप कुछ पूछने तो तुम आसमान पर पैबन्द लगातीं। चली जाओ माँ-बाप के घर। ज़रा तुम्हारा नशा तो उतरे ! तुम औरत ही ऐसी हो कि जहाँ जाओ, सब मिट्टी कर दो ! चलो हो गया विवाह, अब मैं आफ़िस जाता हूं।"

लक्ष्मी—"करो या न करो। करोगे अपनी लड़की का; न करोगे अपनी लड़की का। मुझ पर क्या एहसान ! मेरे तो जो दो-चार गहने हाथ-पाँव में है वे भी मैने देने को रख छोड़े हैं ! और माँ-बाप का नाम तुम न लो। बुरे है तो, भले हैं तो, मेरे माँ-बाप

हैं! तुम उनको ताना न देना। मुझे मारो चाहे काटो, माँ-बाप को मत घसीटना!"

और इनके बाद आँसुओं का भयङ्कर विस्फोट। करम फूटने और ज़िन्दगी के हज़ारों अभावों, कष्टों और स्मृतियों का स्मरण! पति किंकर्तव्यविमूढ़। भूखे, बेचारा विश्वनाथ! असफलता की खीझ से भरे हुए पलायन! नारी के ब्रह्मास्त्र के सामने ढहती हुई तर्क और विवाद की इमारतें! बेचारा विश्वनाथ!

विश्वनाथ आफिस जा रहा है। जा क्या रहा है, रोज़ उधर जाने के अभ्यस्त पाँव उधर उठते जाते हैं। उसका मन टूटा, बिखरा हुआ है। वह सोचना चाहता है पर सोच नही पाता। यह क्या हो गया, कैसे हो गया। उसे कहाँ जाना था? विवाह की समस्या, बहुत संभव है, हल हो जाती। क्यो उसने बात बढ़ने दी? जब मैं रामप्रसाद की कोठी पर होता तब लक्ष्मी से उलझ रहा था। आखिर उसका दोष भी क्या था? बच्चा रो रहा था, खुद उसकी तबीयत अच्छी न थी; सुशीला रोटी बनाने की अवस्था मे न थी; इन झंझटो से याद न रहा होगा कि नमक डाल चुकी है। दोबारा पड़ गया होगा। ज़रा-सी ग़लती हो गई कुछ जान-बूझ कर तो उसने किया नही। आदमी है; ग़लती हो ही जाती है। मैंने फिजूल इतनी बातें बढ़ा दी। आखिर इससे फायदा क्या हुआ? ब्याह तो करना ही पड़ेगा और लक्ष्मी भी

छूट नहीं सकती। तब मन खराब करने और जलने से क्या लाभ ?

पति का सूखा मुँह। रोता हुआ बच्चा। गिरी हुई तबीयत—और यह काण्ड ? न रुकने वाले आँसू और इन सब के बीच अपनी लाचारी। पति—वह बन्धन जिससे छुटकारा नहीं है, जिससे छूटना नही है—से पराजित, उन्हे और अपने, दोनो को दुखी करने की खीझ से जलती हुई नारी ! बेचारी लक्ष्मी !

बेचारी लक्ष्मी !

पति ने गुस्से मे थाली हटा दी और उठकर चले गये। जब तक क्रोध था, बाँध रुका रहा। गुस्से मे उसने बीमार रोते बच्चे को पीट दिया। पीट तो दिया पर पीटते ही मानो जो कुछ दुःख अन्दर घनीभूत हो रहा था वह गल कर आँखो से टपकने लगा। बच्चे को छाती से चिपटा लिया और खाट पर पड़ रही।

आँसू समाप्त हो गये। दुखी, संतप्त मन फिर पति की ओर दौड़ा। वर्षा हो चुकी। बादल बिखर गये ! आकाश साफ हो गया। अब लक्ष्मी सोच रही है—यह सब क्या हो गया ? कैसे उत्साह से उन्होने सुबह उठकर मुझे जगाया था। बेचारे कितने दिनों से व्याह की चिन्ता मे सो नही पाते है। रात-दिन बदहवास दौड़ते फिरते हैं। दो बातें उन्होंने कह दी तो क्या हो गया ? आखिर गलती तो मेरी ही थी। माना, मैंने जान-बूझकर नही की पर भूल तो हुई ही। चुप रह जाती तो

एक क्षणिक प्रतिक्रिया

घर या श्मशान ?

और नौकर मारे डर के दुबक रहा। सुशीला ने कई वार हिम्मत की, माँ की चारपाई तक गई, बुलाकर उठाया। पर शोक का जो पहाड़ घर पर आ टूटा था, वह उठाये न उठा।

लक्ष्मी वार-बार सोचती रही—वे भूखे-प्यासे चले गये। उनका दोष नहीं। दोष मेरा है।

विश्वनाथ वार-बार सोचता रहा—मैंने बात बढ़ाई। उसका दोष क्या था। दोष मेरा है।

सुशीला सोचती थी—दोष किसी का नहीं, मेरा है।

बच्चा क्या सोचता? हाँ, उसे एक ऐसे वातावरण का अनुभव जरूर हो रहा था जिसमें दम घुटता हो। कल सब

और बेचारा बच्चा !

उससे हँसते-बोलते थे, उसे प्यार किया जाता था, उसके ठुमकने पर माँ चूमती थी और उसके अटपटे शब्दों की लोग नकल उतारते थे। आज क्या बात है? माँ वही है, घर वही है, दीदी वही है। तब······तब ?

दिन भर का थका विश्वनाथ घर लौट रहा है। रास्ते भर सोचता जाता है, जो हो गया, हो गया। अब हँसी-खुशी फैला दूँगा। मुन्नू को प्यार करूँगा। लक्ष्मी से कहूँगा—ग़लती मेरी ही थी।

पर घर मे आते ही ठिठक जाता है। घर है कि श्मशान! चीजें बिखरी। कही कोई आवाज़ नहीं। जैसे वर्षों से इसमे कोई

बना रही है और आज ही यह काण्ड हो गया। जीवन की अनिश्चितता के झंझावात में अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के साथ, विकम्पित बेचारी सुशीला !

सोचती है—मै कैसी अभागिन हुई। मेरे कारण बाबूजी बदहवास हैं, अम्मां झींकती हैं। आखिर यह ब्याह राहु बन कर मेरे घर पर क्यों आने को उतावला है। मेरी सखियाँ, गगा और नर्मदा, तो अभी पढ़ ही रही है। मुझसे कुछ बड़ी ही होंगी' क्या उनके माँ-बाप भी इसी प्रकार उनके लिए लड़ते होगे। बेचारे बाबूजी! वे खाये-पिये चले गये। उनका क्या दोष था ? और अम्माँ ! वह बेचारी भी क्या सचमुच अपराधिनी है ? तबीयत ठीक नहीं है; मुन्नू रोता है। निकल गई दो बातें।···पर बाबू जी ने ही क्या कह दिया था ? उनकी क्या ग़लती ? दिन-भर जिस आदमी को मेहनत करनी है उसे अगर ठीक वक्त पर, ठीक तरह से, खाना भी न मिले तो वह कैसे क्या करेगा ? तब दोष किसका है ? मै ही अभागिन इसकी जड़ मे हूँ। गरीबो के घर लड़कियाँ पैदा क्यो होती हैं ? मै लड़की न होती तो अम्माँ क्यो रोती और बाबूजी क्यो बेखाये-पिये उठ जाते ? हे भगवान !—

मै लड़की क्यों हुई ?

दिन भर घर की वही हालत रही जो किसी के मर जाने पर होती है। बच्चा बिलबिलाता रहा, लक्ष्मी मुँह मे दाना ने न डाला।

घर या श्मशान ?

और नौकर मारे डर के दुबक रहा। सुशीला ने कई बार हिम्मत की, माँ की चारपाई तक गई, बुलाकर उठाया। पर शोक का जो पहाड़ घर पर आ टूटा था, वह उठाये न उठा।

लक्ष्मी बार-बार सोचती रही—वे भूखे-प्यासे चले गये। उनका दोष नहीं। दोष मेरा है।

विश्वनाथ बार-बार सोचता रहा—मैंने बात बढ़ाई। उसका दोष क्या था। दोष मेरा है।

सुशीला सोचती थी—दोष किसी का नहीं, मेरा है।

बच्चा क्या सोचता ? हाँ, उसे एक ऐसे वातावरण का अनुभव ज़रूर हो रहा था जिसमे दम घुटता हो। कल सब उससे हँसते-बोलते थे, उसे प्यार किया जाता था, उसके ठुमकने पर माँ चूमती थी और उसके अटपटे शब्दो की लोग नकल उतारते थे। आज क्या बात है ? माँ वही है, घर वही है, दीदी वही है। तब······तब ?

और बेचारा बच्चा !

दिन भर का थका विश्वनाथ घर लौट रहा है। रास्ते भर सोचता जाता है, जो हो गया, हो गया। अब हँसी-खुशी फैला दूँगा। मुन्नू को प्यार करूँगा। लक्ष्मी से कहूँगा—ग़लती मेरी ही थी।

पर घर मे आते ही ठिठक जाता है। घर है कि श्मशान ! चीज़ें बिखरी। कही कोई आवाज़ नही। जैसे वर्षों से इसमे कोई

न हो। भयानक और बोझीला वातावरण। दीवारों पर उदासी छाई हुई। जो कुछ सोचता आ रहा था, सब विस्मृत! दिल बैठा जा रहा है। क्रोध नौकर पर उतर रहा है।

लक्ष्मी, जो सोचती थी, ग़लती मेरी है, क्षमा माँग लूँगी, मुन्नू को गोद मे दे दूँगी, उठ भी न सकी। पड़ी ही रह गई।

गृह-स्वामी का कैसा स्वागत था! दुर्भाग्य विवेक पर छा गया था! बेचारा गृहपति! बेचारी गृहलक्ष्मी!

और अब न चाह कर भी सुबह के दृश्य की पुनरावृत्ति होती है। दुःख घनीभूत हो गया है। बातें बढ़ गई है। जीवन से प्रकाश का लोप हो गया है। गृह मानो दीप-शून्य भूतो का डेरा हो! निराशा, असफलता और खीझ से छटपटाता प्रत्येक प्राणी!

× × ×

क्या यह चित्र एकाकी है? ऐसे भारतीय गृह कितने हैं जिनके आँगन, मे जिनकी दीवारो पर इसके चित्र की परछाइयाँ न दिखाई दें? वे भाग्यवान गृह, जो अपनी दयनीय कूपमण्डूकता में भी, पचास साल पहले तक, हमारी सभ्यता के मुख्य प्रकाश-

वह नारी!

स्तंभ थे, आज कहाँ हैं? हृदय मे मधुर गन्ध, देह मे मातृत्व का गौरव भरे, गृह के अणु-अणु मे व्याप्त,—दीवारें जिसके हास्य से चमकती है, द्वार जिसके उदार हाथ से आतिथ्य के सत्कार की घोषणा करते है, तुलसी का चौरा जिसके अंचल-दीप से आलोकित है, और पति का प्रकोष्ठ जिसके स्नेह-राग से रंजित

है, घर मे समाई हुई, मिट्टी और पत्थर को सजीव करने वाली—वह नारी आज कहाँ है ?

उसकी जगह यह चित्र !—यह चित्र, जो समाज और देश की पुकार, नारी की स्वतन्त्रता की घोषणा और पुरुष की बढ़ती हुई सहानुभूति, के बीच भी घर घर फैलता जाता है। क्यो है यह चित्र ? जब लक्ष्मी चाहती है, इस वातावरण का अन्त हो, विश्वनाथ चाहता है, हँसी-खुशी फैल जाय तब फिर सुबह की घटना की पुनरावृत्ति क्यो हो रही है ?

यहाँ देखते है तो विश्वनाथ अच्छा है; लक्ष्मी अच्छी है। दोनो मे दोनो के लिए सहानुभूति है, शुभकांक्षा है। तब भी इतनी व्यथा है, इतना हाहाकार है। दोनो सफलता चाहते हैं, सुख चाहते हैं, शान्ति और तृप्ति चाहते हैं पर असफल है, दुखी है, अशान्त और अतृप्त हैं !

क्यो ऐसा है ?

[२]

पर इस दुःख के, अतृप्ति के भूकम्प मे कुछ गृह बच भी गये हैं। गहराई न रह गई हो, पर दुःख की काली छाया उनकी दीवारो के बाहर ही रह जाती है।

विश्वनाथ के घर से मुश्किल से एक फर्लांग के फासले पर कमलाकान्त रहते हैं। किसी कोठी मे पचास रुपये पाते है।

एक दूसरा चित्र ! वह हैं, गायत्री है, दो बच्चे है । आदमी हैं; आदमी की कमज़ोरियाँ भी उनमे हैं; आदमी के गुण भी उनमे हैं। यार-दोस्त हैं; जिनमें बैठकर हा-हा हू-हू कर लेते है; पान-पत्ता भी हो जाता है। जब-तव ताश और शतरञ्ज भी जमता है। लक्ष्य इनके सामने भी कोई नहीं है। कमाते हैं, खाते हैं। कुछ इस तरह के आदमी जिसे सदैव माँ की—सँभालने वाली की—ज़रूरत हो। गायत्री है कि इन्हे हाथो पर लिये रहती है।

यह गायत्री लक्ष्मी-जितनी गंभीर भी नही। चञ्चल है। हँसी-मज़ाक और चुहल की आदत है। कभी इसे छेड़ा, कभी उसे गुदगुदाया। सहेलियों में प्रिय, कपड़े-लत्ते की शौकीन, रमणीयता के स्पर्श से पुलकित !

कमलाकान्त के दोस्त एकत्र हैं। खेल हो रहा है। कमलाकान्त आते हैं और गायत्री से कहते हैं—कुछ जलपान कराओ। गायत्री कही जाने की तैयारी मे है। घर मे उपयुक्त सामान भी नहीं। पर कहती है—ज़रा खेलो, अभी तैयार करती हूँ। और झटपट चाय और पकौड़ियाँ तैयार करके वाहर भेजवा देती है।

एक दिन की वात है कि कमलाकान्त कोठी से भरे हुए आये। सेठ से कुछ कहा-सुनी हो गई थी। तिस पर नये महीने का प्रारंभ था। घर मे कुछ न था। तनख़ाह मिली न थी। आते ही नौकर से उलझ पड़े। वच्चे दौड़े आये तो उन्हे घुड़क दिया। कुछ गुस्सा, कुछ गर्मी के दिन की गर्मी !

गायत्री तुरन्त समझ गई कि कुछ हुआ है। उत्तेजित हैं। नौकर को दूसरे काम के लिए कह कमलाकान्त के पास पहुँची। कोट उतार कर रखा। पखा झलने लगी।

प्रसन्न करने की यह कला !

दो मिनट बाद एक तश्तरी मे कुछ जलपान और नीबू का शर्बत लिये आई। कमलाकान्त गुस्से मे थे और चाहते थे कि तश्तरी हटा दे पर उत्तेजना की कोई सामग्री उन्हे न मिली। जलपान और शर्बत के बाद कुछ तरावट पहुँची। पारा नीचे उतरा। गायत्री ने अवसर देखकर बातें शुरू कीः—

"आज तुमने दाढ़ी भी नही बनवाई। बाल बढ़ रहे है।··· आजकल तुम उदास रहते हो। चेहरा सूख गया है। अपनी तन्दुरुस्ती की परवा नही करते। मै कहती हूँ, इस नौकरी मे बड़ी जानमारी, बड़ी हाय-हाय है। रात-दिन की भागदौड़। मै जानती हूँ कि हालत ऐसी नही जो छोड़कर काम चले पर पहले तुम हो, पीछे सब कुछ है। तुमसे ही सब है। न हो, दूसरी हल्की नौकरी कर लो। कुछ कम मिलेगा तो क्या? रूखे-सूखे खा लेंगे, मोटा पहन लेंगे।"······मतलब इसी तरह की हजार बातें। गायत्री के मुँह से मोटा-झोटा पहनने का आश्वासन—शौकीन गायत्री के मुँह से! मीठे शब्द, और पति के लिए गहरी सहानुभूति से भरे हुए।

और कमलाकान्त हैं कि मानो धारा मे बहे जा रहे है। उनके न चाहते हुए भी दिल का गुबार ऊपर उड़ा जा रहा है। वह

ठोस रहना चाहते है पर द्रवित हो रहे है; वे उदासी को बाँधे रखने की चेष्टा करते हैं पर उसकी गाँठें खुलती जा रही हैं। उनके चारों ओर उनके मन को विजड़ित करके एक स्वप्नलोक वन रहा है।

पन्द्रह मिनट,—और सेठ जी दृष्टि से गायब हैं; कहा-सुनी और खीभ समाप्त हो गई है। कमलाकान्त का मुरझाया दिल हरा हो उठा है और चेहरा चमकने लगा है। वही हँसी-खुशी का वातावरण, वही चुहल, वही कुलेल।

इसी तरह एक दिन खाने मे नमक ज्यादा हो गया। ठीक वही अवस्था थी जिसमे लक्ष्मी और विश्वनाथ को हम देख चुके हैं। कमलाकान्त के चेहरे पर वल आया, उन्होने मुँह वनाया। गायत्री भट वोल उठी—"अरे नमक क्या ज्यादा हो गया? च-च-च। एक तरफ कर दो, मै खा लूँगी। दो मिनट ठहर जाओ, मै परवल छौके देती हूँ।" "नहीं, नही, देर न होगी, अभी हुआ जाता है। तुम्हे मेरी क़सम। विना सब्ज़ी का खाना कैसा लगेगा। मुझे वड़ा दुःख होगा। मै भी कैसी हूँ; दो कौर तो तुम खाते हो, वह भी ठीक न वना सकी। और गायत्री के चेहरे पर दुःख की गहरी रेखाएँ अंकित हो गई।

—और न परवल छौकने की ज़रूरत पड़ी, न ठहरने की। कमलाकान्त पत्नी की मधुरता मे डूव गये। दिल पर गुस्से की जगह एक भीनी सुगन्ध छा गई और खाने मे वोलता अधिक नमक मानो शांत हो गया। कमलाकांत वोले—"नहीं नहीं, रहने

दो। तुम्हे यो ही क्या कम परीशानी है। दुःख की क्या बात है ? काम में भूल हो ही जाती है, और कुछ ऐसा ज्यादा नमक नहीं है।" सारा भोजन उन्होने बड़े स्वाद से किया और हँसते-हँसते काम पर गये।

प्यार की गुदगुदाहट

इसी गायत्री की लड़की उमा का व्याह पारसाल हुआ। न सास, न ससुर। अकेला घर। पर गायत्री को कोई कठिनाई न हुई। सहेलियाँ जुट गईं। गायत्री हाथ न लगाती पर हर एक को बोध होता कि मै कोई काम नहीं कर रही हूँ। गायत्री कभी इनके पास आई, कभी उनके पास गई।—"अरी कम्मो! तूने अभी तक जलपान नहीं किया? सुबह से लगी है। चल हट, ऐसा काम मै तुझ से नहीं कराती।" और कम्मो कहती—"भाभी! खिला-खिलाकर आप मुझे बीमार कर देंगी। सुवह से दो वार तो जलपान कर चुकी।"—"नही नही, चल।" दो मिनट बाद—'प्रभा भाभी! क्या भैया आकर हाथ जोडेंगे तव उठोगी? उठो, मै वैठती हूँ।" और भाभी कहती—"चल चल! वड़े तेरे भैया आये हाथ जोड़ने वाले! क्या वे भी कमल है! .. ..अभी अभी तो वैठी हूँ। क्या उमा मेरी विटिया नहीं है?" क्षण भर मे मानसी के पास, उसकी ठुड्डी ऊपर उठाती हुई—"वहन! आज चाँद को ग्रहण क्यो लग रहा है?"—"चल, तुझे सदा चुहल की रहती है।"—"नही-नही बोल, क्या लड़कर आई है?"—"क्या तू वैठने न देगी। मै चली जाऊँगी गायत्री।" फिर दूसरी तरफ नौकर से—"शङ्कर!

अरे भैया ! मुझे तो याद ही न रही । तूने कुछ खाया-पिया नही, रात से पिल रहा है। तुझी पर तो सब बोझ है। चल, कुछ खा ले। रहने दे, वह काम।...तू भी बहू की तरह शर्माता है! मॉग क्यो न लिया ?" –"नही–नही बहू जी ! शर्म की क्या बात ? मैंने सोचा, ज़रा हलवाई को मिठाइयों के ठीक समय पर पहुँचाने की याद दिलाता आऊँ तब खुद मॉग लूँगा।'

इस तरह उमा का व्याह हो गया और किसी को पता भी न लगा कि मैं रात-दिन खपती रही हूँ। सब कुछ हाथों-हाथ हो गया।

गायत्री की गृहस्थी के इतिहास मे बिखरे हुए ऐसे अनेक उदाहरण इकट्ठे किये जा सकते है। उन सबका ज़िक्र करना न यहॉ संभव है, न आवश्यक। इतना ही देखना है कि लक्ष्मी और विश्वनाथ तथा गायत्री और कमलाकान्त दोनो की स्थिति क़रीब-करीब एक-सी है पर दोनो के घरों मे अन्धकार और प्रकाश की भॉति अन्तर है।

यह अन्तर क्यों है ?

समवेदना और सहानुभूति तो लक्ष्मी और विश्वनाथ के बीच भी उससे कुछ कम नहीं है जितनी गायत्री और कमलाकान्त के बीच है। आर्थिक परिस्थिति में भी पहला घर दूसरे से अच्छा ही है। तब भी दो तड़पते हैं, जब दूसरे दो खुश हैं।

समता

बात असल मे यह है कि गृहस्थ- जीवन की सफलता के लिए केवल निजत्त्व की भावना, ममता या सद्भावना ही आवश्यक नही है- इससे भी अधिक आवश्यकता है इनके आचरण की। गृहस्थ-जीवन का सुख टैक्ट और मानसिक नियन्त्रण पर निर्भर है।

और—विषमता

किस समय बोलना चाहिए, किस समय चुप रहना चाहिए, किस समय हँसना चाहिए, किस तरह, कब और क्या बोलना चाहिए, जो स्त्री-पुरुष इन बातो को जानते हैं वे चैन की ज़िन्दगी बिताते है। गायत्री इन्ही से अपने पति को नचाती थी और जिस समय लक्ष्मी, अपनी सद्भावना के होते हुए भी समझ न पाती थी कि घिरते हुए बादल किस तरह हटाये जा सकते है तब गायत्री उन्हे चुटकियो मे उडा देती थी। उदाहरण लें:—झगड़ा हो जाने और विश्वनाथ के चले जाने पर लक्ष्मी अनुभव करती थी कि उसने ग़लती की है; वह विश्वनाथ को खुश भी करना चाहती थी, वह उससे क्षमा माँगना चाहती थी, वह उसकी गोद मे सिर रखकर रोना चाहती थी, वह अनुभव करती थी कि जो कुछ हुआ है, अच्छा नही हुआ है और इस तरह चल नहीं सकता। सदिच्छा उसमे थी, सहानुभूति उसमे थी, और ममत्व भी उसमे था पर रास्ता उसका बिल्कुल उलटा था। जब वह इस कटुता को दूर करना चाहती थी तब उसे संध्या को थके-माँदे आने वाले पति के लिए हँसते हुए और स्वागत को उत्सुक गृह की रचना करती थी; उसे वातावरण हँसी-खुशी का रखना था

पर वह अपने रोदन और दुःख को लिये खाट पर पड़ी रही; अपने दुःख की अवधि बढ़ाती रही और सारा घर दुःख, पीड़ा, शंका और अन्धकार की तरंगों मे लिपटा रहा। जिससे मिलने को उत्सुक थी, वह आया तो उठ भी न सकी। सब के मुँह पर जब प्रकाश की किरणें खेलती होती तब सबके चेहरे मलिन थे। मन उसका अनुकूल था पर कार्य सब प्रतिकूल थे। इसके विरुद्ध गायत्री वाणी का उचित उपयोग करना जानती थी। उसे दुःख की घहराती घटा को दूर करने की कला का ज्ञान था। इसीलिए उसकी गृहस्थी की गाड़ी अपने निश्चित मार्ग पर शान्तिपूर्वक चली जा रही थी, जब लक्ष्मी की गृहस्थी मे फूटे बर्तनो के टकराने का भद्दा और अशुभ स्वर था।

इन दोनो चित्रो को देखो और समझो, इनका क्या मतलब है। मै समझता हूँ कि मैने उन्हे इतना स्पष्ट कर दिया है कि तुम सरलतापूर्वक समझ सकती हो।

साधना-खण्ड: समस्याएँ और हल

[४]

उसके मुँह से फूल झड़ते थे !

चि० कान्ता,

पहले के पत्रो में मै तुम्हे गृह-जीवन के सम्वन्ध मे कई वातें लिख चुका हूँ। आज एक ज़रूरी वात तुम्हे फिर लिख रहा हूँ।

वही रोना

मेरे सामने एक विवाहित स्त्री का एक करुणाजनक पत्र पड़ा हुआ है। इसमे वही रोना है जो हज़ारो को रोते हमने जीवन में देखा होगा। उसको सवसे वड़ी शिकायत यह है कि मैने सव कुछ किया, अपने पति के लिए सव तरह के कष्ट सहती रही पर हमारा गृह-जीवन निराशा और दु:ख से भरा हुआ है। वातावरण मे जैसे एक वोझ है और सव लोग उस वोझ से दवे हुए हैं। उसे समझ मे नही आता कि कैसे गृह-जीवन को सुखी वनाने की कल्पना की जा सकती है।

इस स्त्री की अवस्था सचमुच दयनीय है। मै इसे अच्छी तरह जानता हूँ! बहुत निकट से मैने इसे देखा है। वह एक नेक-दिल और शरीफ औरत है। उसके दिल मे कोई मैल नहीं। रूप-रंग मे भी अच्छी है और जव इसका विवाह हुआ था तो स्वास्थ्य भी काफी अच्छा था। वह मेहनती है। अपव्यय और फैशन की दीमक उसके जीवन मे कभी नही लगी। गृहस्थी में उसने कष्ट भी सहे हैं।

फिर भी वह दुखी है । उसका स्वास्थ्य गल गया है । उसकी चिन्ताएँ एवं शकाएँ बढ़ गई है और जीवन के मार्ग मे चलते हुए अकेलेपन का भाव उसके मन मे भर गया है ।

जब-जब मै इस स्त्री को देखता हूँ, मेरा मन दया से भर जाता है । उसके मुख पर मानो करुणा की छाप पड़ गई है । मुझे दुःख इसलिए भी होता है कि वह एक निर्दोष हृदय की स्त्री है और जीवन की कठिनाइयो को झेलने मे कभी पीछे न रही ।

आश्चर्य यह है कि अपने पति मे उसे कोई ऐसी बात दिखाई नही देती जो विवाहित जीवन की असफलता या दुःख का कारण हो । वह एक परिश्रमी, ईमानदार और गभीर स्वभाव का आदमी है । और कोई ऐसी लत उसे नही जिसके कारण स्त्री को निराश या दुखी होने का कोई कारण हो ।

फिर भी पति दुखी है और स्त्री दुखी है और इस स्त्री की समझ मे यह बात नही आती कि यह सब क्यो है, कैसे है ?

मै इस स्त्री के पति से भी मिला हूँ और उसे समझने की कोशिश की है । वह एक समझदार आदमी है । सहिष्णुता में वह अपनी स्त्री से कुछ कम नही और उसकी स्त्री आराम से रहे, इसकी यथासंभव चेष्टा करता है । उड़ाऊ नही है और घर-गृहस्थी के कार्यो की तरफ ध्यान भी देता है । अपनी पत्नी के प्रति वफादारी के भाव भी उसमे है । तब भी दुःख है, रोना है, खीझ है और ज़िन्दगी की गाड़ी के पहिये रुक-रुक कर चलते

हैं—अवाज़ करते हुए। सब कुछ होकर भी कुछ नहीं है और जीवन में एक अजब सूनापन भर रहा है।

असल बात तो यह है कि विवाहित जीवन में ईमानदारी और वफ़ादारी ही सब कुछ नहीं है। इस ईमानदारी और वफ़ादारी को जीवन में किस प्रकार वर्त्ता जाय, इसके ज्ञान और तदनुकूल आचरण पर विवाहित जीवन का सुख निर्भर करता है। सुखी दाम्पत्य-जीवन की एक स्वतंत्र कला है। इसमें पग-पग पर कौशल ('टैक्ट') की, चतुराई की जरूरत है। इसीलिए खिलाड़ी और सहनशील दम्पति विवाहित जीवन में भावुक दम्पतियों की अपेक्षा अधिक सुखी देखे जाते हैं।

कौशल की जरूरत

इस नारी में, जिसका उल्लेख मैंने यहाँ किया है, सब गुण हैं पर एक ऐसा दुर्गुण है जिसने सब गुणों पर पानी फेर दिया है। उसका दोष यह है कि वह हँसना नहीं जानती। उसमें विनोद-वृत्ति का सर्वथा अभाव है। वह हँसमुख नहीं है। अक्सर उसका मुँह लटका रहता है और जब वह सामान्य मनोदशा में होती है तब भी उसके चेहरे को देख कर यह मालूम होता है मानो कोई दुःखद घटना घट गई है।

मातमी स्वभाव

मैं मानता हूँ कि आजकल के ज़माने में, जब साधारण मनुष्य के चारों ओर दुःख और कठिनाइयों के पहाड़ खड़े हैं

और जब उसके जीवन का संघर्ष बहुत बढ़ गया है, ऐसी स्त्री को लेकर जीवन के कंटकपूर्ण मार्ग पर चलना बहुत मुश्किल है। माना यह स्त्री अकेले गृहस्थी के सब कार्य करती है पर इन कार्यों को करते हुए उसे वह प्रसन्नता नही होती जो उसे 'अपना' घर सँभालने मे होनी चाहिए; वह उस गुदगुदी भरे हर्ष का अनुभव नही करती जिसमे 'अपने' गृह को बनाने का भाव होता है। वह सुबह से रात तक काम मे लगी रहती है पर यह सब काम वह एक मज़दूरनी की तरह करती है; गृहस्वामिनी की तरह, गृह-लक्ष्मी की तरह नही। प्रत्येक काम को करते हुए उसकी खीझ बढ़ती है—उसकी शिकायतों की तादाद बढ़ती जाती है। वह मन मे बड़बड़ाती है। यह खीझ ज़रा-सा दबाव पड़ते ही बाहर आ जाती है और सारे घर के दु:ख का कारण बन जाती है।

कोई नौकर-नौकरानी उसके यहाँ ज्यादा दिन नही ठहरती। जब वे साधारण बात पूछते हैं तो वह उनसे लड़ पड़ती है; झनक कर या व्यंग भरे शब्दो मे बोलती है। नौकर से कोई गलती होती है तो वह एक दृश्य खड़ा कर देती है। बच्चे हँसते, खेलते, मन मे उमंग लिए माँ से कुछ कहने आते है पर उसका मुँह और उसके तेवर देखते ही सहम जाते है। वह जरा-सी बात पर बच्चो को पीट देती है। यदि उसके पति उससे कोई बात कहते है तो वह ऐसा भाव प्रकट करती है कि मुझे इससे क्या और जब वह किसी प्रश्न पर चुप रह जाते और अकेले ही

उसका निवटारा कर लेते है तो वह लम्बा श्वास लेती और कहती है—'मै कौन होती हूँ ?'

एक दूसरी औरत

सचमुच ऐसी स्त्री को लेकर ज़िन्दगी के दिन काटना कठिन है। जव-जव मैं इस स्त्री की मनोदशा पर विचार करता हूँ तव तव मेरे सामने एक दूसरी स्त्री का चित्र आ जाता है। यह स्त्री भी कुछ असाधारण वातावरण मे नहीं जन्मी। पहली की भाँति ही वह एक मध्यम श्रेणी के घर मे पैदा हुई थी। उसे कुछ अच्छी शिक्षा भी न मिली। विवाहित जीवन मे वह पहली-जितनी ईमानदार भी नहीं है; न उतना परिश्रम ही कर सकती है। दुखी स्त्री की अपेक्षा वह आलसी भी है और उसमे फैशन-प्रियता और चटक-मटक के भाव भी कुछ ज्यादा हैं पर उसका घरवाला उससे ख़ुश है; आस पास के लोग उससे खुश रहते है; नौकर-चाकर उसके पास काम करते हुए प्रसन्नता अनुभव करते हैं और दुःख की लम्बी और काली छाया घर से दूर रहती है। जीवन की गाड़ी अपनी स्वाभाविक गति से रास्ता काटती चली जा रही है।

हँसना जाननेवाली

यह स्त्री दिल की उतनी निर्दोष भी नहीं है। वह वातूनी भी ख़ूब है, जो प्रत्येक स्त्री के लिए सवसे वड़ा ख़तरा है, पर वह जब वोलती है, उसके मुँह से फूल झड़ते हैं। वह जीवन की सफलता का एक बहुत बड़ा 'गुर' पा गई है। वह पीठ पीछे जिसकी

आलोचना करती है उससे भी हँसकर बोलती है। जीवन में हास्यप्रियता और विनोद का मूल्य वह समझती है। वह नौकरो से हँसी-हँसी में उनकी शक्ति और इच्छा से ज्यादा काम करा लेती है। वह बच्चो की गलतियों पर आँखें नहीं तरेरती; मिठास के साथ उनको समझा देती है। वह पति के कार्यों का दूसरो के सामने समर्थन करती है और कोई दुःखद प्रसंग आता है तो हँसकर टाल देती है।

जब पहली स्त्री दिन भर के बाद काम पर से लौटने वाले पति के सामने मुँह लटकाये और घर-गृहस्थी की शिकायतो का रजिस्टर खोले हुए आती है तब दूसरी के हाथों मे जलपान की एक तश्तरी और ठंडे पानी का ग्लास होता है और ओठों पर मुस्कराहट होती है। उसका चेहरा मानो पति के स्वागत मे खिला पड़ता है। दो मधुर बोल, ज़रा हँसी और बेचारा पुरुष सन्तोष का श्वास लेता है। कलेजे से दुःख का पहाड़ उतर जाता है और दिन भर के काम की थकावट मानो दूर हो जाती है।

यह याद रखने की बात है कि विवाहित स्त्री के सौभाग्य को नष्ट करने वाली सब से प्रधान वस्तु पति की उसकी ओर से निराशा है। दिन भर के जीविका और जीवन-संघर्ष के बाद यदि कोई पति अपनी पत्नी से उस शांतिकर, तृप्तिकर वाणी और विनोद की आशा करता है जो धूप से झुलस रहे वृक्ष मे शीतल

पति की निराशा

जल डालने के समान है, तो कुछ असंभव माँग नहीं पेश करता। विवाहित जीवन की सफलता के लिए जितने गुणों की आवश्यकता है उनमे में प्रफुल्लता को सब से अधिक प्रभावशाली मानता हूँ। इस गुण की आवश्यकता पुरुष के लिए कुछ कम नही है पर स्त्री मे उसका होना बहुत ज़रूरी है। मै मानता हूँ कि इसका अभ्यास करना उसके लिए पुरुष की अपेक्षा सरल भी है। क्योंकि पुरुप को जैसी कठोर वास्तविकताओं की दुनिया में चलने को विवश होना पड़ता है वह स्त्री के जीवन में उतनी उग्रता के साथ प्रकट नहीं होती।

मैंने अनेक स्त्रियो के जीवन को केवल इस दुर्गुण के कारण नष्ट होते देखा है। कोई दूसरी वात पुरुष को गृह-जीवन से इतना शीघ्र नही उवा देती जितनी घर का मुर्दनी से भरा हुआ वातावरण। वह दुनिया के युद्ध से थका और प्यासा घर मे इस आशा के साथ आता है कि यहाँ प्रेम, हास्य, अभिन्नता का जो झरना वह रहा है, उसके शीतल जल मे स्नान कर सारी थकावट दूर हो जायगी और उसे पीकर कुछ देर तो तृप्ति का अनुभव होगा, अगली मंज़िल तक चलने की ताकत पांवो मे आयेगी और दिल में कठिनाइयों को झेलने के लिए स्फूर्ति पैदा होगी। जिस समय इस प्रकार की आशाओ से उसका हृदय तरंगित हो, तव पहली स्त्री जो दृश्य उपस्थित करती है, उससे उसकी आशा-लता पर तुषार-पात होता है और वह यह अनुभव

यह मुर्दनी का वातावरण !

करता है कि यह क्या है और क्यों है ? उसकी उमगे दब जाती हैं और जीवन मे इकलेपन का अनुभव उसमे भर जाता है।

जब मैं कहता हूँ कि उत्फुल्लता—हँसमुख रहना—स्त्री के लिए सबसे उपयोगी गुण है तब मै यह केवल पति के लिए अथवा गृह की दृष्टि से ही नही कहता वरन् इन सबसे ज्यादा स्वयं स्त्री के लिए हितकारी समझकर कहता हूँ। नारी का हृदय पुरुष से अधिक भाव-प्रवण—'सेंसिटिव'—होता है। इसीलिए उसके जीवन मे बहुत-सी ऐसी बातें आती हैं जो यो बहुत छोटी होती हैं पर उसे बहुत ज्यादा अशान्त और चचल कर देती है। यदि स्त्री इन छोटी-छोटी बातो के लिए रोने लगे या रोने का अभ्यास डाल ले तो उसका जीना दूभर हो जायगा और वह सारे घर मे अपनी रोनी सूरत की छाया डाले बिना न रहेगी। वह रोयेगी और रुलायेगी। स्वयं दुखी होगी और दूसरो को दुखी करेगी। प्रायः शुरू मे स्त्रियाँ इसे बहुत मामूली बात समझती हैं। और कई तो इसे पति को अपने पक्ष मे करने और कुटुम्ब के अन्य सदस्यो के विरुद्ध एक अस्त्र के रूप मे भी इस प्रकार रोने और मान का अभ्यास करती हैं। हर हालत मे वे एक ऐसी बड़ी भूल करती हैं जो बाद मे बढ़कर असाध्य बीमारी का रूप धारण कर लेती है। रोने का अभ्यास बड़ा बुरा है। यह अफीम-सेवन की भाँति एक घोर बन्धनकारी व्यसन है। एक बार इसके जाल मे फँसने पर फिर स्त्री अपने को बेबस पाती है। वह चाहकर भी अपना उद्धार नहीं कर सकती। वह हँसने

की कोशिश करती है पर मुँह पर चाँदनी की जगह बादलों की अँधियारी छा जाती है।

जो .स्त्रियाँ अस्त्र के रूप मे इसका प्रयोग करती हैं वे एक खतरनाक अस्त्र के साथ खेलती हैं। उनके लिए यह याद रखना सदा हितकर होगा कि यह अस्त्र अत्यन्त अविश्वसनीय है और जब इससे क्षणिक सफलता मिलती है तब भी अन्त में स्त्री घाटे में रहती है। एक तो ऐसे अस्त्र के सामने, थोड़ी देर के लिए, केवल दब्बू, विलासी एवं कमजोर हृदय के पति ही दबते हैं। दूसरी बात यह कि इससे घर में जो अशान्ति पैदा होती है उससे प्रत्येक पति मे, फिर चाहे वह किसी प्रकार के स्वभाव का क्यो न हो, एक खीझ पैदा हो जाती है और समय के साथ यह खीझ बढ़ती जाती है। यह याद रखो कि जो पति किसी सिद्धान्त और कर्तव्य के लिए नहीं वरन् नारी का मुँह और आँसू देखकर अपने माता-पिता अथवा अन्य प्रियजन को छोड़ सकता है, वह समय आने पर उस स्त्री की उपेक्षा करने मे भी न चूकेगा।

इसलिए हर अवस्था मे नारी के लिए उचित यह है कि वह सदा हँसमुख रहने का अभ्यास करे। यह कोई कठिन बात नहीं है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि

उत्फुल्लता

खुशमिज़ाजी एक सरल गुण है जो ईमानदारी के साथ अभ्यास करने पर सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। जो स्त्री छोटी-छोटी दुखी करने

वाली बातो को हँसकर उड़ा देती है, वह मानो सदा एक श्रेष्ठ एवं विश्वसनीय अस्त्र का प्रयोग करती है। दो मिनट की सहन-शीलता आगे के लिए अमृत हो जाती है और ज़रा-सी ग़लती या असहनशीलता से कभी समाप्त न होने वाले दुःखो का जो सिलसिला चल निकलता, उसका अन्त हो जाता है। पहली स्त्री की भाँति ही बहुत सी स्त्रियाँ इस सरल हँसी का प्रयोग करने की जगह बात का बतंगड़ बना देती हैं और स्वयं दुखी होती है। वे अकारण दुःख मोल लेती फिरती हैं। उनका चेहरा पीला पड़ जाता है; आँखें प्रकाशहीन हो जाती है और शरीर शिथिल एवं कान्तिहीन हो जाता है। इन बातो से पति का दिल जीतने की झूठी मृग-तृष्णा मे पड़ कर वे सच्चे मार्ग से भटक जाती है। इसके कारण पति की विरक्ति बढ़ती जाती है। कोई स्त्री पति की चिन्ताएँ बढ़ाकर यदि उसका प्रेम पाने की कोशिश करती है तो मानो बालू से तेल निकालना चाहती है।

बदमिज़ाज स्त्री का दोष यह है कि वह नहीं जानती कि कौन काम किस तरह और किस समय करना चाहिए। उसे

बच्चों का विनाश

कभी अपना रोना रोने से ही फ़ुर्सत नही मिलती। वह जब पति को खिला रही होती है तब ऐसी चिन्ताजनक बाते छेड़ देती है कि भोजन विष हो जाता है। वह बात-बात पर बच्चों को डाँटती, बुरा-भला कहती और उनके साथ-साथ पति की ख़बर लेती है। बच्चे ऐसी स्त्री से सदा शंकित रहते हैं। उन्हें मातृत्व की

मधुरता की छाया में पनपने का अवसर नही मिलता। फलत: वे उद्दण्ड और सैलानी हो जाते है और मौका मिलते ही घर से निकल जाते हैं। घर मे उनके लिए कोई आकर्षण नही रह जाता। जब तक बाहर रहते है, माँ की डरावनी आँखो और चंचल ज़बान से बचे रहते है।

जो स्त्री सदा अपनी क़िस्मत का रोना रोती रहती है, जिसे अपने पति की बुरी आलोचना करने, उसको नीचा दिखाने की आदत पड़ गई है वह कभी विवाहित जीवन मे सुखी होने की आशा नही कर सकती। ऐसी स्त्री सदा संदेह, शंका और जासूसी अर्थात् अविश्वास की दुनिया मे रहती है। यदि उसका पति किसी स्त्री से कुछ बात करता है या किसी स्त्री की ओर देखता है या उससे मिलता है तो उसका हृदय शंका से काँप उठता है। यदि उसका पति किसी स्त्री से हँसकर बात करता है तो उसके कलेजे पर साँप लोट जाते है और वह ईर्ष्या से भर जाती है। वह पति को गुलाम बनाकर रखना चाहती है पर उसे कैसे वश मे रखा जा सकता है, इसे बिल्कुल नहीं जानती, न जानने के लिए उत्साह या उत्कण्ठा ही प्रकट करती है। वह यह भूल जाती है कि अविश्वास से गुप्त संभावनाएँ बढ़ती है, जब विश्वास एवं निष्ठा मे उनकी बाढ़ रुकी रहती है। इस प्रकार की ईर्ष्यालु और रोनी स्त्री को कोई स्त्री नही चाहती और वह जब स्त्रियो मे जाती है तो प्रायः स्त्रियाँ उससे जल्द मुक्ति पाने की ईश्वर से प्रार्थना करती हैं। ऐसी स्त्री

को कोई हार्दिक सखी नहीं मिलती क्योंकि वह किसी का विश्वास नहीं कर सकती और न उस पर कोई दूसरी स्त्री विश्वास कर सकती है।

इसके विरुद्ध जो स्त्री सदा हँसमुख रहती है उसकी सर्वत्र पूछ होती है। बच्चे उसे चाहते है, नौकर उसका मुँह जोहते है। कुटुम्बी और प्रियजन उसे मानते है और स्त्रियो के समाज मे उसकी उपस्थिति की अवश्यकता सदा महसूस की जाती है। वह दूसरो के दुःख को कम करती है और अपनी दुःख सहने की शक्ति को वढ़ा लेती है। उसका स्वास्थ्य अच्छा रहता है, शरीर मे स्फूर्ति बनी रहती है और चालीस वर्ष की अवस्था मे भी वह पच्चीस की मालूम पड़ती है। दुःख और अभाव उसके स्वभाव पर वहुत कम असर डाल सकते हैं क्योंकि वह इनको दिल तक पहुँचने और महत्व पाने का मौका ही नही देती। हँसी और प्रफुल्लता के प्रवाह मे गृह-जीवन का कूड़ा कर्कट बह जाता है और दुःखदायी कॉटे इस हवा मे उड़ जाते है।

हँसमुख स्त्री

निश्चय ही विवाहित जीवन का आनन्द इस बात पर निर्भर है कि स्त्री के मुँह से फूल झड़ते है या आँसू के बादल टकराते है। हँसता हुआ चेहरा खिले हुए गुलाब के फूल की तरह आकर्षित करता है। जो स्त्री बोलने मे शर्बत घोलती है, अपने पति को देखते ही जिसका चेहरा खिल उठता है और जिसकी बात-

चीत में हँसी और गुदगुदी की लहर उठती है उसका विवाहित जीवन बहुधा सफल होगा। ऐसी स्त्री गृह-जीवन का शृंगार है और उसे पाकर पति अपनी किस्मत को सराहता और सुख एवं निश्चिन्तता के साथ साँस लेता है।

साधना-खण्ड: समस्याएँ और हल

[५]

कौन सुखी है—राजरानी या शान्ता ?

प्यारी चम्पा,

जीवन मे अक्सर यह जानना बड़ा कठिन होता है कि कौन सुखी है, कौन दुखी। इसी सम्बन्ध मे आज तुम्हें एक मनोरंजक बात सुनाऊँगा।

राजरानी सेठ राजमल की लड़की और रायबहादुर चाँदमल की पुत्रवधू है। बड़े घर की बेटी, बड़े घर की बहू। राजरानी रूपरानी है; गहने कपड़ो के मानसिक बोझ से दबी हुई। भरा शरीर, चाँद-सा मुखड़ा, सुन्दर और आकर्षक वस्त्रो से सजा, मृदु-मृदु हँसने वाला, हर चीज़ का बाहुल्य, ऐश्वर्य और वैभव से घिरा और उसी के बोझ से लदा जीवन, दास-दासियाँ, कुछ काम नही, अनुरक्त पति। हर एक कहता है—भाग्य से ही ऐसा घर मिलता है। बेटी की किस्मत थी, ऐसा घर मिला। अब राज करे।

दूसरी ओर राजरानी की एक, स्कूल की प्रिय सखी शान्ता को देखो। बेचारी ने कैसा राजकुमारियो-सा सौन्दर्य पाया था। पिता उसको पुत्रों से भी ज्यादा चाहते थे। धन कुछ वैसा न था पर बेटी को अच्छी शिक्षा देने की उन्होंने सदा कोशिश की। और देख-सुनकर कृष्णचन्द्र को ब्याह दिया। कृष्णचन्द्र अच्छे विचारो का एक युवक। गरीब घर। माता और बहन। सब अच्छे स्वभाव के। कृष्णचन्द्र कर्त्तव्यशील

युवक, कुछ विचार और सिद्धान्त भी हैं उसके अपने। सीधी-सादी ईमानदारी की जिन्दगी बिताने की कोशिश करता है। एक समाचारपत्र के कार्यालय मे है। साठ रुपये मिलते हैं। घर मे नौकर-चाकर की गु जाइश नहीं। शान्ता को ही अधिकांश काम करने पड़ते है। सब कहते हैं—बेचारी की जिन्दगी ऐसी ही गई, न बाप के यहाँ आराम से बैठ सकी, न ससुराल मे ही उसे चैन है। बाप की अक्ल मारी गई थी, नही तो क्या शान्ता को अच्छा घर न मिलता? राय बिन्दाप्रसाद ने तो इशारे इशारे मे अपने लड़के के लिए बात भी चलाई थी पर जो किस्मत मे ही नही था, वह कहाँ से मिलता?

राजरानी सेठानी है, 'मालकिन बहू' है। सुबह आठ बजे हजार रुपये के बढ़िया महोगनी के, चाँदी के ठोस डडो वाली मच्छर दानी से भूषित, पलॅग से करवटे बदलने और जॅभाइयाँ लेने के बाद उठती है। फिर चाय पीकर कुछ देर आरामकुर्सी पर लेटती है और कोई अखबार उलटती है पर ज्यादातर रात का बचा कोई उपन्यास पढ़ने मे लग जाती है। फिर घंटे भर बाद एक दो अॅगडाई, एकाध जॅभाई लेकर शौचादि से निवृत्त होने जाती है। फिर कुछ देर दास-दासियो को 'यह करो, वह करो, यह हुआ, वह हुआ', मतलब आज्ञाओ और प्रश्नो से ज़रा सजग कर, अवसर अनुकूल हुआ तो ज़रा गप-शप लगा ग्यारह बजे नहाने जाती है। बारह बजे तक नहा-धोकर, साज-शृंगार करके चौके मे पहुँचती है; क्योंकि

पति देवता के कोठी से लौटकर आने का समय हो रहा होता है। देख रेख करने के बाद या किसी खास चीज़ की तैयारी की आज्ञा देने के बाद अपने कमरे मे चली जाती है। पति देव आते हैं, कपड़े उतारते हैं; ठण्ड के दिन हुए तो सुक्खू कहार से मालिश होती है, गर्मी के दिन हुए तो चमेली के तेल की मालिश सिर्फ सिर तक ही सीमित रहती है। इसके बाद स्नान होता है। फिर आध घण्टे गृह देवता की पूजा चलती है। इसके बाद 'छोटे मालिक' भोजन पर बैठते हैं। 'बड़े मालिक' अकसर काशी मे रहते हैं; धर्म बटोर रहे हैं। जब यहाँ रहते हैं तब भी व्यापार का काम कम ही देखते हैं। उनकी स्त्री बहुत दिन पहले मर चुकी थी। राजरानी के पति भी पहले राजरानी के प्रथम संस्करण को खत्म कर चुके हैं। राजरानी (दूसरी) आवृत्ति है।

करीब-करीब राजरानी को आराम ही आराम है। काम वैसा कुछ नहीं। रूप है, धन, है, नौकर हैं, चाकर है, मोटर है, सिनेमा है, गप-शप है, किताबें हैं, कुछ न कुछ होता ही रहता है। पति के साथ कभी सिनेमा चली जाती है, कभी मोटर लेकर सैर को या सखी-सहेलियों से मिलने निकल जाती है। कभी चार औरतें मेल-मुलाकात की जुटीं तो ताश का खेल छिड़ जाता है। पर वैसे लम्बे दिन ज्यादातर सूने-सूने से लगते हैं। कैसे बीतें ये दिन! कभी सो जाती है, कभी टेलीफोन के डायल से खेलती है—हलो मंजु...कोई उत्तर नहीं। फिर हलो कान्ता... बहिन जी, कान्ता अपनी जीजी राधा के साथ कहीं गई है।

तब रेडियो का स्वीच दब जाता है और पलॅग पर पड़ जाती है।

हाँ, वह बड़े आराम से है, राज करती है, किसके ऐसे भाग्य होंगे !

शुरू-शुरू मे राजरानी भी शायद कुछ ऐसा ही सोचती थी। ऊपर से कुछ कहती हो पर अन्दर से अपने वैभव से पुलकित थी। हुकूमत की दुनिया पाकर उसका अहंकार तृप्त था। पर कब तक वह अपने को भुलाये रख सकती थी ? और भुलाने की सामग्री भी उसके पास क्या थी ? उसका मन इधर उधर झाँकता था, उसका नारीत्व प्यासा-प्यासा अपने अन्दर घुटता, छटपटाता और कभी बिना समझे कि वह क्या चाहता है, एक गहरी साँस लेता था।

वह बड़े आराम से है ! पर यह आराम ही उसके लिए भयंकर हो उठा है। यह सारा ऐश्वर्य मानो एक व्यंग-सा उसके जीवन से टकराता है।

लम्बे दिन, इस आराम की ज़िन्दगी मे मानो और लम्बे होते जाते हैं और रातें ऐसी जिनके आने न आने का कोई महत्त्व नही। जब उसे नींद की ज़रूरत होती है, नींद नही आती; जब उसे जागने की ज़रूरत होती है वह सोती रहती है।

उसके कण्ठ से, अन्दर ही अन्दर, प्रतिध्वनित होने वाले शब्द बार बार निकलते हैं—'बड़े आराम से हूँ। काश मै आराम से न होती, मेरे आगे भी कुछ काम होता !' वह जानती है; निष्क्रियता से उसका जीवन अवसन्न होता जाता है। एक

शिथिल, प्रयासहीन जीवन—मानो चेतना इतनी ही है कि चेतना का ज्ञान है। बाकी सब कुछ धूमिल, जीवनहीन, मेरुदण्ड जिसका टूट गया है ऐसी निश्चेष्ट, धारा में बहने वाली जिन्दगी! कोई अवरोध नहीं, कोई संघर्ष नहीं, सब कुछ यंत्र की तरह चलता हुआ, बेस्वाद, फीका!

तब राजरानी चिन्ताग्रस्त रहने लगती है। नींद आती है; नही भी आती है। नींद पर उसका कुछ वश नहीं, मन पर तो जैसे बिल्कुल नहीं। तब मधुर मधुर बोलने वाली राजरानी खीभती है। चिड़चिड़ी हो रही है। अब इससे उलझी, उससे टकराई।

और इस मनःस्थिति मे, चोरी-चोरी, शैतान उसके मन मे घुस रहा है। कभी कभी राजरानी चौंकती है, और अपने को देख कर काँप उठती है। मुश्किल यह है कि भूलने और इस आराम की ज़िन्दगी से पलायन करने की सामग्री भी उसके पास नहीं है। उसके पास समय ही समय है, और काम कुछ नही। किसमें वह अपने को उलझाये कि ये सूने दिन, और उससे अधिक सूनी रातें, कृतार्थ हो जायें। फल यह है कि चूँकि दूसरों के सामने वह कम होती है, एकान्त में उसे अपना सामना करना पड़ता है। और कदाचित् यही अपना सामना करना, राजरानी-जैसों के लिए सब से भयंकर है। इस दर्पण मे मुँह ही दिखता तो कोई बात न थी, पर अन्तःकरण भी नंगा-नंगा सा दिख जाता है।

और अब राजरानी सोचती है—'आराम का यह जीवन ! हाय, कैसा है आराम का यह जीवन !'—और द्रौपदी के चीर-सा उसका दुःख और उसकी चिन्ता—उसकी उलझन बढ़ती ही जारही है।

× × ×

शान्ता सुबह ४-५ बजे उठ जाती है। भगवान का स्मरण करती है और पति, सास और नन्द इत्यादि कुटुम्बियों के मंगल की कामना। इसके बाद शौचादि से निवृत्त हो घर की सफाई कर डालती है। तब स्नान करती है। फिर थोड़ी देर उपासना। इसके बाद सिगड़ी सुलगा कर सुबह का नाश्ता तैयार करती है। जब तक घर उठता है, बहुत-सा कार्य समाप्त हो चुका रहता है। जिससे उठने पर मिली, दो प्यारी-प्यारी दिल खुश करने वाली बातें की, हँसते-मुस्कराते हर एक का स्वागत किया। जैसे प्रभात होते ही ससार प्रकाशित हो उठता है वैसे ही शान्ता के उठने से सारा घर हँसने लगता है। नाश्ता तैयार होने पर सब को बैठा कर वह जलपान कराती है। इसके बाद पति के पास बैठकर ताज़ा अखबार देखती तथा कुछ अध्ययन करती है। कभी बातचीत करती है। अपनी कठिनाइयाँ, समस्याएँ, दुःख-दर्द सभी पर समय-समय पर बात होती है। पर इनमे कभी खीझ नहीं आती। सहानुभूति और ममत्व के भाव से सब तर होता है। ठीक आठ बजे रसोईघर मे चली जाती है और नौ बजे तक भोजन तैयार हो जाता है। यही भोजन बनाने में दूसरी स्त्री को

दो घंटे लगते पर वह कुछ ऐसे ढ्योढ़ से काम करती है कि घण्टे का काम आध घण्टे में होता है। पति को और ननद को हँस-हँस कर भोजन कराया। ननद को स्कूल भेजा और पान-एलायची देकर पति को आफिस के लिए विदा किया। फिर कपड़े धोने बैठ गई। कपड़े धोकर धूप में सूखने को डाल दिये और फिर सास इत्यादि को भोजन कराया। तब खुद खाने बैठी। इसके बाद कुछ देर आराम किया। फिर सास के पास बैठकर सीना-पिरोना, कपड़े-लत्ते का काम करती रही। कभी कोई सखी-सहेली आ गई तो उससे बातचीत चली, कभी सखी-सहेलियों के घर भी गई। फिर चार बजे सिगड़ी सुलगा कर जलपान तैयार किया। पति और ननद को आते ही जलपान कराया। दो मीठी बातें कीं। कपड़े तहाकर रखे। खाना बनाया, खिलाया और फिर थोड़ी दूर पति के साथ टहलने चली गई। ननद माधुरी भी अक्सर साथ रहती है। आठ बजे तक लौटकर कुछ बातचीत, चर्चा। फिर बिस्तर-बिछौने ठीक किये और नौ बजे भगवान की प्रार्थना करके और उसका धन्यवाद करके सो गई।

मतलब सुबह से शाम तक काम ही काम है। पर शान्ता है कि उसे कुछ मालूम नहीं पड़ता। उसे इस काम में ही आराम है। कभी किसी दिन उसके मन में लालसा नहीं पैदा हुई—यह लालसा कि मैं राजरानी होती। जो कुछ उसे मिला है उसमें वह तृप्त है। दरअसल तृप्ति तो उसी के अन्दर है; इसके लिए वह

ति पर निर्भर नहीं है। उसके पास इतना समय भी नही कि तीव्र और पीड़क लालसाएँ या आकांक्षाएँ उसके हृदय को विकम्पित करे। पति के निकट वह आत्मविश्वास से भरी है। जीवन का सर्वोत्कृष्ट आश्वासन उसे सहज लभ्य है। यहाँ जो कुछ भी है उसका है; उसका घर है, उसके पति है, उसकी कान्ता (ननद) है, उसकी माँ है। इस अपनेपन मे लिपटी हुई उसकी तृप्ति मानो उसे चारो ओर से आवेष्ठित किये हुए है। कही दंश नही है; कही हाहाकार नही है, जो कुछ है वह मानो सहज है; मानो उसी का है, उसी के लिए है, और जन्म-जन्मान्तर से उसके साथ है। कही कोई खीझ नही, कोई अनुताप नही।

हाँ, शान्ता कभी चैन से न बैठी। न माता-पिता के घर, न ससुराल मे।

लोग कहते है—बेचारी और अभागिनी शान्ता ! एक राजरानी को देखो, एक शान्ता को देखो !

मै देखता हूँ। मुझे कही अभागिनी शान्ता नही दिखाई देती। मै उसमे गृहलक्ष्मी के दर्शन करता हूँ। सुखी, तृप्त, उदार, महामना नारी।

और राजरानी को भी देखता हूँ तो रोना आता है ! शिथिल, अपहृता, हाहाकार और द्वन्द्व, अभाव और प्रतिक्रिया, खीझ और वंचना से भरी, सब कुछ है परंन्तु उसके बीच प्यास से तड़पती नारी !

× × ×

आज के सामाजिक जीवन मे इस प्रकार के दृश्य मैंने वार-वार देखे है। और कौन नही देखता। वात कोई मुश्किल नही। जो औरत काम में लगी है वह उस औरत से जिसके पास आराम ही आराम है, कुछ काम नहीं, हज़ार दर्जे बेहतर है। उसके पास रोने के लिए समय नही है; उसका जीवन वंचित और अभिशप्त नहीं है। वेकारी और आलस्य से वढ़कर ज़िन्दगी का कोई दुश्मन नही। ये वे कॉटे हैं जो अनजाने हृदय को छेद डालते हैं और उसका संचित मधु टपक कर खत्म हो जाता है। जव काम नही होता, शैतान हमारे मनोरंजन के लिए हमारा साथी वन जाता है। जव काम होता है और उस काम मे अपनापन का वंधन होता है तव जीवन मे तृप्ति और सुख का संयोग अधिक होता है। इसीलिए कामकाजी स्त्रियॉ निठल्ली और कोरी वातूनी औरतों से अधिक सुखी देखी जाती हैं और समाज तथा गृहस्थ-जीवन दोनो के लिए प्रायः श्रेयस्कर सिद्ध होती हैं।

अव तुम देखो: सुखी कौन है—राजरानी या शान्ता?

साधना-खण्ड: समस्याएँ और हल

[६]

पति के हृदय की रानी

चि० कान्ता,

विवाह का जुआ

दुनिया मे हर साल लाखों विवाह होते हैं। इनमे पश्चिम के देशो मे होने वाले व्याह अक्सर प्रेम-विवाह होते हैं—दो प्राणी एक दूसरे को देख-सुनकर, मित्रता की परणति होने पर प्रणय-वन्धन मे बँधते हैं। पूर्व के देशो मे अनेक विचित्र रीतियो के वीच विवाह के उत्सव किये जाते हैं। लेकिन सर्वत्र कुछ न कुछ उत्सव मनाया ही जाता है। सगे-सम्वन्धियों के उल्लास, गुरु-जनो के आशीर्वाद, सखा-सहेलियों के विनोद तथा धर्माचार के आश्वासन के वीच दो धड़कते हुए हृदय समान्य जीवन के एक वन्धन मे बँधते हैं। हाँ, 'दो धड़कते हृदय—आशाओं से भरे, उत्सुक, भविष्य के प्रति किंचित् सहमे हुए, अनिश्चित जीवन की ज़िम्मेदारियो को उठाने को उत्कण्ठित, स्वप्न से जिनकी आंखे मुँद रही हैं फिर भी एक नवीन मार्ग पर जिन्हे चलना है, दाँव फेंक चुके जुआरी की आशा-निराशा और द्वन्द्व की मानसिक स्थिति से पूर्ण। क्या होगा, क्या न होगा!

हाँ, हर साल लाखो विवाह होते हैं पर इनमे इक्के-दुक्के ही

टूटा हुआ सपना

सफल हो पाते हैं—ऐसे जिन पर भविष्य आनन्द की मुहर लगा देता है और जीवन की कठोर यात्रा जिसके चुनाव का समर्थन करती है। नही तो अक्सर होता यह है कि ज़िन्दगी के दो झटको मे दिल की खुमारी और आँखो के सपने हवा हो जाते है। फिर जीवन की मञ्ज़िल कठिनाइयो से भर जाती है—क़दम-कदम पर समस्याओ और जटिलताओ से भरी हुई। कल जिस नारी की वाणी मे कोयल की कूक सुनाई पड़ती थी आज उससे कौवा कॉव-कॉव करता सुनाई पड़ता है, जो पत्नी हृदय की आशा और ऑखो की ज्योति थी, वह निराशा की कठोर मंज़िल की तरह असह्य हो जाती है। जो पति ज़िन्दगी का नशा बनकर आया था वह खुमारी के बाद की थकान और शिथिलता के रूप मे आता है और जिसे देखकर पत्नी की ऑखे ठण्डी और तृप्त हो जाती थी वह अब धूप से जलते हुए लम्बे चटियल मैदान की तरह भयानक लगता है। एकाएक जो नारी हॅसती हुई चॉदनी के मादक वातावरण मे तैर रही थी, वह पाती है कि उसके हाथ-पॉव शिथिल हो गये है और उसके नीचे केवल जलती रेत है और किनारा दूर है। तब सारा जीवन धुएॅ से भर जाता है। यह ऐसी स्थिति है जिससे पलायन संभव नहीं है। सामाजिक समता, स्वतंत्रता और तलाक की सुविधाऍ भी इस धुएॅ को हटा नही सकती। नारी और पुरुष जहाँ भी जाते है जीवन की पहली और गहरी छाप साथ लाते है और फिर वह खिल-खिल

हँसी, जिसमे कही अवरोध नहीं है और रोड़ों और कण्टको को अपने अन्दर निमग्न करती जीवन को ओतप्रोत करके वहती है केवल एक सपना रह जाती है, सपना,—एक टूटा हुआ सपना जो लाख हाथ-पैर मारो, फिर न आयेगा।

और स्त्री-पुरुष की इस अतृप्ति के वीच, अपनी विचित्र स्थिति और वनावट के कारण स्त्री ज़्यादा घाटे का सौदा कर लेती है।

घाटा भी, लाभ भी !

स्त्री का स्वभाव है कि जिस किसी 'चीज़ की तरफ़ झुकती है, ,एक तूफ़ानी वेग से झुकती है; वैसे साधारण जीवन मे आगा पीछा सोचने की प्रवृत्ति उसमे पुरुप से कहीं अधिक है पर कुछ वातें ऐसी है जिनमे वह असमर्थ और लाचार है। चाहे किसी विचार और वर्ग की नारी हो, जीवन मे कही न कहीं जाकर उसे पुरुष का आश्रय लेना ही पडेगा—कहीं न कही आत्मार्पण उसके जीवन मे आयेगा; और जव तक यह नहीं आता, वह अपने प्रति केवल एक वंचना का जीवन व्यतीत कर सकती है। जव वात ऐसी है, तव संयुक्त जीवन के सौदे मे, स्थिति के अनुसार, औरत अधिक फ़ायदे मे भी रहती है और अधिक घाटे मे भी। अगर दोनो मे प्रेम हुआ, सम्वन्ध अच्छे और ईमानदारी के हुए, दोनो दोनो के प्रति वफ़ादार, कर्तव्यशील और जागरूक हुए, तो समझ लो कि नारी को वह तृप्ति मिलेगी जिसके आगे सव कुछ तुच्छ है और जिसे पाकर मानो वह सव कुछ पागई। ऐसी नारी न केवल स्वयं अपने मे सन्तुष्ट होती, वल्कि वह गृह का भूषण

होती है और समाज के जिस क्षेत्र मे जब प्रवेश करती है अपनी अन्तःतृप्ति, आनन्द और प्रकाश को साथ ले जाती है; निकट के वातावरण को आशा, प्रकाश, ममता और मातृत्व की उदारता से भर देती है। वह घर को उठाती, समाज को उठाती और समाज के बच्चो को उठाती चलती है। यही नारी का गौरव है। प्रेम, सेवा और त्याग से गृह और समाज को शक्तिमान एवं पुष्ट करने का गौरव। जब वह पति के हृदय की रानी बनती है तभी समाज की उदार, महिमा-महिम माता बनने का गौरव भी पा जाती है।

और यदि दिलो मे खिँचावट आई, अन्तर पड़ा, खाई गहरी हुई, जीवन मे सशय, हृदय मे प्रश्न और दिमाग मे खीझ और अतृप्ति आई तो नारी का जीवन न केवल यह भयङ्कर निराशा दुखी बल्कि अशक्त और अपदार्थ भी हो जाता है, गृह, सन्तति और समाज के शासन और नियमन की शक्ति वह खो बैठती है। भले वह ऊपर से हँसे, उत्सवो मे शामिल हो, शृंगार करती और अपने सुख की घोषणा करती फिरे पर वह अन्दर से खोखली, बिल्कुल खोखली हो जाती है—उस सूखी लकड़ी के समान जिसकी आकृति ऊपर से ज्यो की त्यो कायम हो पर जिसका गूदा सबका सब, घुन के पेट मे चला गया हो और कोई नहीं जानता कि कब वह कड़ कड़ करके टूट जायगी और अभिनय समाप्त हो जायगा। ऐसी नारी अपने लिए और समाज के लिए एक भयानक खतरा है।

अपनी हँसी मे भयङ्कर विष छिपाये हुए, असन्तोष के दाने बखेरती हुई, अपने पद-चाप से दिशाओ को कम्पित करती हुई नारी ! नारी—जो आस पास के वातावरण के अमृत विन्दुओ को सुखाकर उनकी जगह ज़हर उगलती चलती है। नारी, जिसकी आँखो मे सूनेपन की आग है, जिसके दिल मे अभाव का हाहाकार है, जिसकी लटो मे कालसर्पो का फूत्कार है।

तब सब दृष्टियों से उचित और आवश्यक है कि नारी को गृह मे उसका उचित स्थान प्राप्त हो। लाखो औरतो की मॉगो मे हरसाल सिन्दूर पड़ता है पर अधिकांश की लाली बालों के बीच ही रह जाती है, हृदय तक उसकी चमक नहीं पहुँचती। सवाल यह है और एक बड़ा ज़रूरी सवाल है कि कैसे ये, या इन मे से अधिकांश नारियॉ, पति के हृदय की रानी बन सकती हैं। कैसे वे पतियो, बेनकेल निरंकुश पतियो, पर काबू पा सकती हैं। यद्यपि यह दावा नही किया जा सकता कि कुछ ख़ास नियमो का पालन करने से सब स्त्रियॉ पति के हृदय को वश मे कर सकती है, पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि कुछ ज़रूरी बातो पर ध्यान देने से अधिकांश को पति-हृदय की रानी बनने मे कोई कठिनाई न होगी।

पहली बात यह है कि पत्नी को सदा ख़्याल रखना चाहिए कि जिस आदमी के साथ वह सारी ज़िन्दगी के लिए बन्धन मे, आश्वासन मे, बँधी है उसकी चिन्ताओ का बोझ कम हो

उसकी चिन्ताएँ कम हों; उसे शान्ति मिले, तृप्ति हो।

सहानुभूति का आश्वासन

पति को यह अनुभव हो कि उसकी पत्नी उसी की है; उसमे तन्यय है; उसके सुख से सुखी और दुःख से दुखी। पत्नी को सदा हँसते हुए पति का स्वागत करना चाहिए, याद रखो स्वच्छ निर्मल हँसी से बढ़ कर थकावट—चाहे मानसिक हो या शारीरिक—दूर करनेवाली और शिथिल मानस को तरोताज़ा कर देने वाला दूसरी चीज नही है। यदि तुम चतुर स्त्री हो तो कभी पति को मुँह लटकाने का मौक़ा न दो, उसे प्रसन्न और प्रफुल्ल रखो। और ऐसा तुम स्वयं हँसमुख रह कर आसानी से कर सकती हो। इस हँसमुख स्वभाव ने हज़ारो घरों को श्मशान होने से बचा लिया है। जिस वक्त पति चिन्तित हो, तुम प्रेम से, उमँगते हृदय से उसके पास जाओ। उसे अनुभव हो कि मुझे जितनी चिन्ता है, मेरी पत्नी को मुझे चिन्तित देखकर मुझसे अधिक है। पति का हाथ हाथ में लेकर उसे प्रेम का, सहानुभूति का आश्वासन दो। कहो कि "मै ऐसी न हुई कि आपके बोझ उठा लेती, आपको निश्चिन्त कर देती पर जैसी हूँ, तुम्हारी हूँ, क्या तुम मुझे न बताओगे? क्यो दुखी हो? देखो, तुम्हारे चेहरे पर ज़रा भी उदासी आती है तो मेरा कलेजा फटने लगता है। उठो, दिल छोटा न करो। कुछ यों ही तुमपर क्या कम चिन्ताएँ है, क्या कम बोझ है? अगर तुम्ही इस तरह निराश हो जाओगे तो हम लोगों का क्या हाल होगा। दस का

वोझ तुम पर है।" इसके वाद चिन्ता के कारण का पता लगने पर यथोचित इलाज करो। जैसे पैसे या खर्च की तंगी के कारण चिन्ता है तो कहो—"मै तो खुद देख रही हूँ, इतना खर्च कैसे निभेगा ! सोचती हूँ, महराजिन को अलग कर दूँ, नौकर की जगह दो तीन रुपये महीने पर चौका-वर्तन के लिए एक महरिन रख लूँ। यही न थोडा काम मुझे वढ़ जायगा पर ऐसे समय मे तुम्हारे काम न आई तो कव आऊँगी।" वीवी (ननद) के व्याह के लिए भी मैने सोचा है। अगर तुम बुरा न मानो तो कहूँ ! एकाध जरूरी गहने रखकर वाकी उसे चढ़ा दूँ। मेरा क्या, तुम रहोगे तो वहुत गहने आयँगे-जायँगे।" अगर वडे साहव या मालिक से झगडा हुआ है तो ऐसी वाते करो कि अपमान या लाचारी की जो गाँस दिल मे फँसी अभी तक चुभ रही है वह निकल जाये। जैसे—"वह ऐसी वातें क्यो करता है ? पिल कर तो तुम काम करते हो, तव भी ऐसी वातें होती हैं ? दुनिया मानो ईमानदार आदमियो के लिए है ही नही। देखो गीता के चाचा जी को ! काम-वाम तो जो करते है मालूम ही है पर ऊपर से सेठ के हितैषी वने हुए हैं। हर साल तरक्की होती जाती है। खैर; अपना भाग्य ही कुछ ऐसा है, क्या करोगे ? भगवान् की आस रखो, एक न एक दिन सुनेंगे।" नही, हो सके तो सेठ रामलाल का काम क्यो नही कर लेते ? दो वार तो कहला चुका है।" मतलव, इसी तरह की वातें जिससे पुरुष समझे कि पत्नी उसकी चिन्ता मे शरीक है।

वात यह है कि पुरुष केवल यही नही चाहता कि उसकी घरवाली उसे प्यार करे—इससे ज्यादा वह यह चाहता है कि वह अपने कार्यो और शब्दो मे मेरे प्रति वार-वार उस प्रेम के आश्वासन को दोहराती रहे। स्वभावतः आदमी चुप्पी औरत पसन्द नही करता, फिर चाहे वह स्वभाव की कितनी ही भली क्यो न हो। क्योंकि जीवन के सघर्ष मे नीरवता का, चुप्पेपन का बोझ सॅभालना सब के बूते का काम नहीं। पुरुष खुशमिजाज, नेक और जरा वातूनी औरत चाहता है। वह चाहता है, स्त्री वातें करें, उसकी वाते करे, उससे वातें करे क्योकि इससे उसके गर्व को सन्तोप प्राप्त होता है और वह सोचता है, मेरी घरी वाली मेरी है, मुझ पर ध्यान देती है, मुझमे रस लेती है। अगर तुम आँखें खोलकर अपने इर्द गिर्द देखोगी तो तुम्हारी सखी-सहेलियो मे ऐसे वहुतेरे उदाहरण तुमको मिल जायॅगे कि जो स्त्र जरा विनोदी और वाचाल होती है, पुरुष उसकी ओर खूब झुकते है। क्योकि ऐसी स्त्री से पुरुष को एक मित्र, एक सखा, एक प्यारे साथी का आनन्द प्राप्त होता है!

पुरुष-हृदय का रहस्य

पुरुष का स्वभाव है कि वह स्त्री से केवल पत्नी का ही काम लेना नही चाहता, वह चाहता है कि उसकी पत्नी दुःख और कष्ट मे माता की भाँति उसे आश्रय और सान्त्वना दे, वेटी की भॉति सम्मान और श्रद्धा करे और जीवन-सखी की भॉति उसे सेवा और

अनेकरूपा नारी

प्रेम का दान दे। जो स्त्री इस वात को समझती है, वह मानो आधा मैदान मार लेती है।

इसके वाद दूसरी वात यह है कि स्त्री अपना स्वास्थ्य ठीक रखे। स्वास्थ्य मे सौंदर्य का भाव अपने-आप आजाता है। जो

स्वास्थ्य-सौंदर्य और सुरुचि

स्त्री अपने स्वास्थ्य-सौंदर्य की रक्षा नहीं करती वह मानो प्रति दिन अपने सोहाग मे आग लगाती है। स्त्री चाहे गुणवती हो पर यदि वह अपने यौवन को, अपने स्वास्थ्य-सौंदर्य को अधिक से अधिक दिनो तक वनाये नहीं रख सकती तो मानो दाम्पत्य जीवन की सफलता के एक वहुत रहस्य से अनभिज्ञ है। हर एक स्त्री रति नही होती पर हर एक स्त्री जो कुछ उसे मिला है उसकी रक्षा कर सकती, वल्कि एक सीमा तक उसे वढ़ा सकती है। अपने आकर्षण को कायम रखना हर समझदार स्त्री का कर्तव्य है। स्त्री को जानना चाहिए कि कव किस तरह की साड़ी पहनना उसके लिए अच्छा होगा, किस वेश-भूषा मे वह ज्यादा फवेगी। स्वास्थ्य-सौंदर्य और आकर्षण की रक्षा के लिए एक ओर चित्रकार की भाँति वेश-भूषा मे उपयुक्त रंगों के मिश्रण का ज्ञान होना चाहिए, दूसरी ओर शारीरिक भोग विलास पर संयम भी रखना चाहिए। पुरुष को अपनी चंचलता से एकदम कामुक भेड़िये का रूप देने वाली स्त्री खुद अपने पाँव मे कुल्हाड़ी मारती है। वह पुरुष की मीठी, लुभावनी, क्षणिक आवेश की वातों मे अवश हो जाती है और अपने को उसकी इच्छा पर

छोड़ देती है। कुछ दिनो मे एक ओर पुरुष का औचित्य की सीमा से बढ़ा हुआ आवेश कम हो जाता है, दूसरी ओर स्त्री अपने यौवन के आकर्षण और अपने स्वास्थ्य और सौंदर्य के संचित कोष को रिक्त पाती है। इस रिक्त नारी के प्रति दया और करुणा चाहे जितनी प्रदर्शित की जाय, यह सच है कि अब फिर वह अपना पूर्व स्थान प्राप्त न कर सकेगी। इसलिए जहाँ नारी के जीवन मे उसका गुणवती, मधुरभाषिणी और हँसमुख होना काम आता है तहाँ उसका स्वास्थ्य और सौंदर्य भी दाम्पत्य जीवन की मादकता को बढ़ाता है।

फिर स्वास्थ्य का एक दूसरा पहलू भी तो है। जो नारी स्वस्थ है वह मानो पति के व्यवसाय को चमकाने वाली पूँजी है, क्योंकि

रुग्णा बनाम स्वस्थ स्त्री

ऐसी स्वस्थ नारी अपनी ओर से पति को बहुत कुछ निश्चिन्त कर सकती है। वह घर के काम-काज मे मन लगा सकती है, घूम-फिर कर, पढ़-लिखकर, सखी-सहेलियो से मिलकर पति के जीवन को हज़ार तरह से मधुर और अधिक सहने योग्य बना सकती है। रोगिणी स्त्री दाम्पत्य-जीवन का अभिशाप है। जब रोग घर मे आता है, जब स्वास्थ्य जवाब दे देता है तब मानो असमय ही सूर्यास्त हो जाता है; या सुखी, शीतल जीवन का चन्द्रमा राहु से निगल लिया जाता है। मै अक्सर देखता हूँ कि स्त्रियाँ पहले इस बात की परवा नही करती और जब पति की, घर के अन्य लोगो की उपेक्षा मिलने लगती

है तब सिर्फ करम फूटने का रोना रोतीं और बेमतलब बातें करती हैं। अभी-अभी एक लड़की का चित्र मेरी आँखों के सामने है। ब्याह के पहले इसने अपनी मूर्खता और अहङ्कार में अपने स्वास्थ्य को खराब कर लिया। ज़रा सी बात होती तो यह दो-दो दिन खाना न खाती, दवा दी जाती तो चुपके से फेंक देती, या उलटे लड़ बैठती। कोई समझाता तो तिनक उठती। आज उसके पत्रों की प्रत्येक लाइन निराशा और आँसू से गुँथी होती है। वह चारों ओर से उपेक्षित होकर रोती है और खीझ के कारण अंट-शंट बकने, दूसरों को दोष देने का उसका स्वभाव दिन-दिन गहरा और घना होता जाता है।

ऐसी मूर्ख लड़कियों की समाज में कमी नहीं है। कोई इन्हें रास्ता नहीं बता सकता और ये लाख सिर पटकें इनकी क़िस्मत में सुख नहीं, प्रकाश नहीं। जान बूझकर दुःख, रोदन, अंधकार और धुएँ से इन्होंने अपना जीवन भर रखा है। यह लड़की अजीब है। जब लोगों ने इसे सुखी करना चाहा, यह जान बूझ कर दुःखी रही। जब लोगों ने इसे अच्छा रास्ता बताया, इसने घमंड और प्रमाद में टेढ़ा मार्ग चुना; जब लोग इसे हँसाना चाहते, यह रोना रोती। ऐसी लड़की और ऐसी नारी विवाह करके न केवल अपना जीवन नष्ट करती है बल्कि अपने पति और अपने स्नेही-सम्बन्धियों को भी दुखित करती है। जो स्त्री ख़ुद यह नहीं जानती कि उसका स्वास्थ्य ही वह नींव है जिस पर उसका भावी जीवन, उसकी गृहस्थी, उसके पति की प्रसन्नता तथा उसकी संतान

का भविष्य निर्भर है; जो स्त्री यह नही जानती कि नीरोग और स्वस्थ काया ही स्त्री के रूप और सौन्दर्य, आकर्षण और मधुरिमा को वनाये रखने की कुंजी है और चाहे कैसा ही सरल, गंभीर, गुणवान पति हो, पत्नी मे ज़रा-सी मिठास, ज़रा-सी चंचलता, जरा शोखी, ज़रा विनोद और सरसता चाहता ही है, तव तक मानो वह विवाहित जीवन की वाराखड़ी से भी परिचित नही।

तीसरी चीज़ है वात करने का सलीका। मेरा मतलव यह नही कि वह साहित्य और विज्ञान के आधुनिक विषयो पर अधिकार के साथ वार्ता कर ही सके। मेरा मतलव यहाँ सिर्फ इतना ही है कि उसे जानना चाहिए कि किस विषय पर किस तरह और किस मौके पर कौन सी वात पति से कहनी है। अक्सर औरतें मौके-वेमौके अपना रोना रोया करती है और जव उनके दुखड़े का रजिस्टर खुलता है तव खत्म होने का नाम ही नही लेता। जव वे पति के दिल को पिघलाने और अपना काम बनाने के लिए रो रही होती है तभी मानो अपने भाग्य को मिट्टी मे गाड़ रही होती है। समय वदल गया है। मै मानता हूँ, एक पुश्त पहले का सीधा पति स्त्री के आँसू के सामने पानी हो जाता था। उस समय पत्नी के हाथ मे रोदन और मान का ब्रह्मास्त्र था और वह अक्सर सफल भी होता था। आज का पति, इस विषय मे, अपने पूर्वज से कई वातो मे भिन्न है। उसकी परिस्थिति वदल गई

रोदन और पीडा का सौदा करने वाली!

है। उसके जीवन में संघर्ष पुराने ज़माने के पति से कहीं अधिक है। वह बदलते हुए युग का प्राणी है; अनेक प्रकार की खींचा-तानी से पूर्ण एक संघर्ष और कठिनाई का जीवन लिये टेढ़े-मेढ़े मार्ग पर चलने वाला! इसके साथ वह पुराना अस्त्र सफल नहीं हो सकता। नारी के पक्ष मे यह एक बहुत बड़ी भूल होगी अगर वह अब भी समझती रहेगी कि रोकर, दुखड़े गाकर वह पति का दिल जीत सकती है। आज का पति दु:ख से भागने वाला है; बाहर के जीवन मे संघर्ष और दु:ख यो ही इतने हैं कि घर के कलह को वह उदासीनता से नहीं देख सकता। इस थके, बहुश्रम-पीड़ित पति को पत्नी के दुखड़े बहुत जल्द ऊबा देते हैं। हर आँसू और हर कहानी के साथ उसका दिल फटता जाता है और उसकी कल्पनाएँ अभाव की प्रतिक्रिया से चोटीली हो स्वप्नलोक की तरफ उड़ती हैं। पति दुखदायी स्थिति से भागना चाहता है पर मूर्ख स्त्री अपने दुखड़ो से बराबर उसका पीछा करती है। वह उसकी स्थिति को असह्नीय कर देती है। पति चाहता है दो घड़ी हँसी-खुशी से बीते, पर स्त्री दिल फटने वाली बातें करती है। अन्त मे पति का धैर्य चुक जाता है और वह पहले पत्नी से मुँह चुराना शुरू करता है; फिर खुले तौर पर उसकी उपेक्षा करने लगता है।

कहा जायगा कि आखिर स्त्री पति से अपने दु:ख-सुख न कहेगी तो किससे कहेगी। हाँ, कहेगी वह सब कुछ पर समय पर और ढंग से। एक औरत समय को पहचान कर, ऐसे ढग

से बात करती है कि पति का हृदय पानी-पानी हो जाता है; कठोरता और विरक्ति की जगह उलटे मुलायमियत और प्रेम पैदा होता है; जितना औरत चाहती है, उससे ज़्यादा करा लेती है और सब कुछ आसानी से, हँसते हँसते। दूसरी ऐसे बेमौके, और ऐसे भद्दे ढंग से बातें करती है कि खुद उसका मतलब हल होना तो दूर रहा, उलटे और दुःख एवं और रोने का सामान जुटता जाता है। चक्रवृद्धि व्याज की तरह दुःख बढ़-बढ कर घनीभूत होता जाता है और एक दिन आता है कि न केवल प्रेम की पतंग कट जाती है बल्कि उसके उड़ाने का सामान भी खत्म हो चुका होता है। बस यही नारी की मृत्यु है और यही पति की परनारी के प्रति आखेट प्रवृत्ति का आरंभ है।

अगर औरतें ज़रा समझदारी से काम लें; सिर्फ भावना की धारा में बहने की जगह ज़रा संयम, ज़रा विवेक का उपयोग करें तो उनके जीवन का बहुत-सा दुःख अपने-आप दूर हो जाय पर स्त्रियों के साथ मुश्किल यह है कि वे प्रायः दुराग्रही और हठी होती हैं। जब उनके दिमाग में कोई बात आ जाती है तो जल्द निकलती नहीं। किन्तु जिन्हें जीवन में सफलता और सुख चाहिए, उनको इन प्रवृत्तियों पर अंकुश तो रखना ही पड़ेगा और मेरा ख्याल है कि ये बातें कुछ मुश्किल नहीं; थोड़े अभ्यास से सहज ही स्त्रियाँ इसे कर सकती हैं। इन चन्द बातों के सहारे

वे अक्षय यौवन-सुख के झरने तक पहुँच सकती हैं। मृदुता मनोज्ञता, स्वास्थ्य, वाग्चातुर्य, सेवा, सहानुभूति, और अवसर-ज्ञान वे गुर हैं जिनको अपनाकर अधिकांश स्त्रियाँ पति-हृदय की रानी बन सकती हैं।

[७]

हमारे पति क्या चाहते हैं ?

कान्ता,

इस पत्र में मैं तुम्हें पुरुषों की आकांक्षाओं की एक झलक देना चाहता हूँ ताकि तुम जान सको कि विवाह के बाद पतियों को कैसे सन्तुष्ट किया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में मुझे एक घटना याद आती है। कई साल हो गये। कानपुर की बात है। मैं अपने एक मित्र के यहाँ ठहरा हुआ था। फरवरी का महीना; दो पहर का वक्त—लगभग दो या ढाई बजे होंगे। खा-पीकर मैं लेटा था। यह हमारे मित्र का पढ़ने लिखने का कमरा था। इसी के बगल में उनका शयनागार था जिसे उनकी श्रीमती जी का कमरा कहना चाहिए। ये लोग मध्यम श्रेणी के गृहस्थ थे। पत्नी सुन्दरी और अच्छे स्वभाव वाली: पति शिक्षित, स्वस्थ और समझदार। किसी कदर परदे और छूतछात से भी ये लोग दूर थे।

मैं लेटा और अलसाया हुआ ज़िन्दगी की उड़ान और कल्पना के स्वप्न में मिले-जुले बहुतेरे आवश्यक-अनावश्यक सवालों पर विचार कर रहा था कि बग़ल के कमरे से स्वागत के शब्द सुनाई पड़े; फिर हँसी, खिलखिलाहट, मज़ाक और विनोद भरी छेड़-छाड़। मालूम हुआ, कई सखियाँ आई हैं और एक दूसरे से जवाब तलब किया जा रहा है कि चाँद इतने दिनों कहाँ भूला रहा। फिर सफाई दी जाने लगी। काम-काज की बातें हुईं। ग़रज़ इसी

तरह की हज़ार बातें। और इन्ही बातो मे कब और कैसे अपने अपने पतियो की इच्छा-आकांक्षा की बाते छिड गई, मै कह नही सकता। फिर अनेक गोप्य और अगोप्य बाते। हर एक बारी बारी से सुना रही थी कि उसके पति की उससे कैसी पटती है और वे क्या चाहते है। बीच-बीच मे चुहल और चुटकी; प्रेमभरे व्यग। मुझे अनायास मनोरजन का बढ़िया मसाला मिल गया था और मै आँख मूँदे लेटा हुआ इन सुनने और न सुनने योग्य बातो का मज़ा ले रहा था।

इसमे कोई शक नहीं कि उन दिलचस्प बतो का अगर विस्तार से या हूबहू वर्णन किया जाय तो एक बहुत ही मनोरजक और दिलो मे गुदगुदी पैदा करने वाली रचना बन जायगी पर यहाँ मै उन सब की चर्चा न करूँगा; कोई लाभ भी नही। हाँ, उनकी बातचीत के निष्कर्ष की चंद बातें ज़रूर बताऊँगा जिनसे हमारी अविवाहित या नव-विवाहित बहनें दाम्पत्य जीवन के सुख के रहस्य की जानकारी प्राप्त कर सकती है।

शीला और दमयन्ती, कान्ता और चन्दो, मनोरमा और सुशीला सब ने बारी-बारी से बताया कि उनके पति उनसे क्या चाहते हैं। किसी ने कहा—वह चाहते है कि उनकी आकाक्षाएँ। मै सदा हँसती रहूँ। किसी ने कहा—वह औरत के सलीके, पहनने ओढ़ने, शृंगार तथा बातचीत पर ज़्यादा ध्यान देते हैं। एक ने कहा कि घर की व्यवस्था पर उनका ध्यान पहले जाता है। अगर घर मे स्वच्छता

है, हर एक चीज़ अपनी जगह पर अच्छी तरह रखी हुई है तो वे बहुत खुश होते है। दूसरी ने कहा—सबसे बड़ी चीज़ उनकी निगाह मे औरत की वफादारी है। फिर वे यह भी चाहते हैं कि मै उनके साथ जीवन-सखी की तरह रहूँ। उनका और अपना सुख-दुःख एक समझूँ, अनुभव करूँ; पर साथ ही बच्चो की माता हूँ इसका भी ध्यान दिलाते रहते है।

इसके अलावा और भी औरतो—सखी-सहेलियो के बारे मे चर्चा चली और समय-असमय उन्होने जो भी अपने पतियो के विषय मे कहा था, नमक-मिर्च लगाकर दोहराया गया। फिर किसी ने यह भी कहा—"बहिन! मर्द सब एक से होते है। अपना मतलब निकालने मे चतुर!"

पर उनकी नानी की कहानी को हम यहाँ छोड़ देंगे। असल मे शीला और दमयन्ती, कान्ता और चन्दो, मनोरमा और सुशीला ने जो कुछ बताया सब ठीक था।

विवाह की कठिनाई

दुनिया मे हर तरह के आदमी होते है। कोई कुछ चाहता है; कोई कुछ। कोई अपनी औरत को विदुषी के रूप मे देखना चाहता है, कोई चाहता है, वह ऐसी हो कि घर-गृहस्थी का बोझ खुशी-खुशी उठा ले। कोई चाहता है; वह रूपवती हो, मनहरण मुस्कराहट के साथ स्वागत करे। हँसकर मीठी-मीठी बोली बोले, अपने को सुन्दर वस्त्रो से विभूषित रखे। इसके विरुद्ध कोई चाहता है कि उसकी पत्नी सती हो, सीधी, आज्ञाकारिणी, निर्मल और शान्त। मतलब,

हज़ार तरह के आदमी दुनिया मे हैं, और सब अपनी-अपनी धुन की पत्नी चाहते हैं। यह कहना बहुत मुश्किल है कि जब तुम्हारा विवाह होगा, तुम्हे कैसे पति मिलेंगे। अगर तुम पुराने तरीके के घर की बेटी हो तो जिस आदमी के पल्ले पड़ोगी उसके विषय मे लुका-छिपी, घर की नौकरानियो या छोटे बच्चो के ज़रिये जो कुछ जानकारी प्राप्त कर लोगी उसी पर तुम्हे सन्तोष करना पड़ेगा। अगर तुम सुधारक घर की लड़की हो, तुम्हारे माता-पिता परदा नही करते, विवाह तुम्हारी मर्ज़ी से करते है और तुम लड़के के चुनाव मे स्वतत्र हो तो भी इससे परिस्थिति मे कोई विशेष अन्तर नही पड़ता। जहाँ प्रेम-विवाह होते है तहाँ और पुराने ढङ्ग के विवाह मे स्त्री की बाह्य परिस्थिति और सुविधाओ मे जो भी अन्तर हो, आन्तरिक स्थिति के मामले मे दोनो एक से है। यह जानना दोनो ही दशाओ मे लगभग एक-सा कठिन है कि हमारे पति अन्त मे कैसे निकलेंगे और जीवन के सघर्ष के बीच क्या करने से उनका प्रेम प्राप्त हो सकेगा।

इसलिए अच्छा यह होगा कि तुम कुछ ऐसी बातो पर ध्यान दो और उन्हे अपने अन्दर पैदा करने की कोशिश करो जिन्हे अक्सर पुरुष पसन्द करते है। विवाह एक जुआ है पर कोशिश करके उसे एक कला का रूप भी दिया जा सकता है। अगर तुम अपने अन्दर वे चन्द ज़रूरी विशेपताएँ पैदा कर लोगी जिनकी तरफ ज्यादातर पुरुष झुकते है, तो विवाह के जुए मे तुम्हे जिस तरह की इच्छा वाला पति मिले, आशा की

जा सकती है कि तुम उसे नाथ लोगी, उसे खुश रख सकोगी, कम से कम इतना तो होगा कि तुम्हारी गृहस्थी मे फूटे वर्तनो की टकराहट की भद्दी आवाज़ न सुनाई पड़ेगी।

पहली वात, जिसे ज्यादातर पति चाहते है, स्त्री की वफादारी है। वफादारी का मतलव यह है कि तुम अपने पति को दिल से पति मानने और अनुभव करने की कोशिश करो। तुम समझो कि तुम जहाँ भी हो, जिसके साथ भी हो पति ही तुम्हारे जीवन-वृत्त का केन्द्रविन्दु है। तुम्हारी दुनिया उसी को लेकर है, उसी से है और उसी के साथ है। तुम्हारे लिए उस स्थान पर दूसरा पुरुप नहीं है। यदि कभी तुम्हारे मन मे किसी अन्य पुरुप के प्रति आकर्षण रहा भी हो तो उसे भूल जाने की कोशिश करो। व्यावहारिक दृष्टि से भी यही वात तुम्हारे लिए लाभदायक और सुखकर होगी। जो मिल नही सकता या जो दूर चला गया है, जिसके और तुम्हारे वीच एक व्यवधान आ गया है उसे याद रख कर अपने हृदय को जलाना और अपनी दुनिया को विगाड़ना कोई वुद्धिमानी नहीं। भावनाओ का मूल्य जीवन मे वहुत है पर भावनाओ से ही जीवन की गाड़ी न चलेगी। सामने जो सत्य और वास्तविकता का क्षेत्र दूर तक फैला हुआ है उसे देखकर चलने मे सुख भी है, कल्याण भी है। इसलिए पुरानी वातें भुलाकर पति मे केन्द्रित होने, उनके साथ अपने जीवन की एकाग्रता और तन्मयता अनुभव करने की कोशिश करो। मै इसे

वफादारी

असम्भव नहीं मानना। इस कार्य से न केवल परम्परा स्त्री की सहायक है बल्कि उसकी स्थिति के अनुसार अपने को ढाल सकने की क्षमता भी इसके अनुकूल है। मतलब यह कि तुम अपने पति के प्रति सच्चाई और ईमानदारी की जिन्दगी व्यतीत करो। तुम्हारे लिए जिस स्थान पर तुम्हारा पति है उस स्थान पर दूसरा नहीं है। इस दिशा में तुम्हें अपने पति को पूर्णतः आश्वस्त कर देना होगा कि तुम उसी की हो। जब कोई पति यह अनुभव कर लेता है कि उसकी स्त्री सम्पूर्णतः उसी की है तो वह सुख की साँस लेता है और उसकी अहंवृत्ति तृप्त हो जाती है। तब पति अक्सर अपनी पत्नी के प्रति कोमल हो जाता है।

इस वफादारी का यही मतलब नहीं है कि तुम किसी दूसरे पुरुष की कामना नहीं करती या किसी अन्य पुरुष के प्रति तुम्हारे दिल में कोई खिंचाव, कोई आकर्षण नहीं है। वफादारी का मतलब यह है कि तुम मन से, और आचरण द्वारा भी, अपने पति और उनकी दुनिया जिनको लेकर है उनकी कल्याण-कामना करती हो, उनको सुखी रखने, उनको संतोष देने और उनकी सेवा की सच्चाई से चेष्टा करती हो। जीवन में जिसे तुमने वरण कर लिया है, भले ही अनिच्छा से हो, उससे पलायन संभव नहीं है। तब अच्छी नीति यही है कि उसको लेकर चलो, उससे मिलकर चलो, उसकी होकर चलो।

वफादारी के अन्दर एक और भाव अपनेपन का भी होता

है। तुम्हारे पति जैसे भी है तुम्हारे है। तुम उनकी हो, वे तुम्हारे हैं। दोनो धर्म से, या इसे न भी मानो तो अपनेपन का भाव परिस्थिति और संस्कार से, जुड़ गये हैं। उनका दोष तुम्हारा दोष है, उनका गुण तुम्हारा गुण। जो स्त्री इस निजत्त्व का अनुभव करती है, और अधिकांश स्त्रियों मे यह भाव प्रवल होता है, वह अपने पति को अपमानित नहीं करती, न किसी के सामने उसका उपहास करती है। वह दूसरो के स्वर्ण-मन्दिर को देखकर क्या करेगी, उसे तो उसकी झोपड़ी से ही छाया और आश्रय मिलने वाला है। इस निजत्त्व के अनुभव मे जो प्रेम का भाव है उसी को लेकर नारी युग-युग से मानव-सभ्यता की यात्रा पूरी कर रही है! इसी को लेकर उसने अपने सपनो का संसार रचा है। इसी को लेकर उसने दुर्गम मार्गों को पार किया है और कष्ट और पीड़ा का काल इसी के सहारे उसके सामने से निकल गया है। इसलिए पति के प्रति ईमानदारी, वफादारी, निजत्त्व का अनुभव पहला गुण है जिसे दुनिया के हर हिस्से मे, और हर तरह के पति, अपनी पत्नी मे चाहते है। इसके बिना नारी पत्नी नही, केवल एक खेल है।

इसलिए ज़रूरी है कि तुम अपने पति के प्रति इस प्रकार की ईमानदारी और वफादारी का अनुभव करो और बरताव भी तदनुकूल करो। इसी को स्त्री का सत कहा गया है पर अक्सर स्त्रियाँ समझती हैं कि उनका किसी अन्य पुरुष की ओर

न झुकना ही यथेष्ठ है। मैंने कितनी ही स्त्रियो को देखा है जो शारीरिक सम्बन्ध मे पवित्र है, पर-पुरुष की ओर निगाह नहीं उठाती, किन्तु पतियो से लड़ती रहती है, ज़रा-ज़रा सी और बेमतलब बातो के लिए उन्हे दुखी करती और खुद भी दुखी होती है। इस प्रकार का सतीत्व बिल्कुल व्यर्थ है और जीवन मे उसका कोई लाभ नही मिलने वाला है। जहाँ सत् है, तहाँ पति के कल्याण की आन्तरिक कामना है, तहाँ प्रेम है, मृदुता है, तहाँ जीवन व्यासायिक नही है, वह सरल और सीधा है।

दूसरा गुण जिसे ज्यादातर पति अपनी पत्नियो मे चाहते है उनकी व्यस्था रखने की शक्ति है। बहुत ही कम पति ऐसे मिलेंगे जो अपने घर को खानाबदोशो के

व्यवस्था और सजावट

डेरे के रूप मे देखना चाहते हों। हर एक पति चाहता है कि उसका घर घर मालूम पडे जिसमे हर चीज़ क़रीने से रखी हुई और हर काम क़ायदे से हो। जिस चीज़ की जहाँ ज़रूरत हो वह वही होनी चाहिए और वह भी इस ढङ्ग से कि देखने मे अच्छी और खूबसूरत मालूम हो। जिस स्त्री मे व्यवस्था-शक्ति नही है, वह पत्नी होने के अयोग्य है। क्योकि प्रत्येक पत्नी, पति के साथ गृहस्वामिनी है। हमारे यहाँ उसे गृहलक्ष्मी की जो संज्ञा दी गई है वह अर्थ-हीन नहीं है। अच्छी और चतुर गृहणी के हाथ मे घर हँसता हुआ मालूम पड़ता है और फूहड स्त्री के हाथो विधवा के

समान विशृङ्खल, अव्यवस्थित और हर जोड़ से टूटा हुआ। फिर क्रम और व्यवस्था से जीवन की बहुत सी झंझटों से रक्षा हो जाती है। इसलिए बेटियो, अच्छा हो तुम हर चीज़ को क़ायदे से रखने और हर काम को क़ायदे से करने की आदत डालो। क्या यह तुम्हें अच्छा लगेगा कि जब तुम्हारे पति स्नानागार में प्रवेश करें तब तुम धोती और कपड़े ढूंढती फिरो, और उधर तुम्हारा तवा जल रहा हो? या जब तुम लोग बाज़ार या सिनेमा या किसी मित्र या सम्बन्धी के घर चलने को तैयार हो तब तुम कमीज़ में बटन टाँकने बैठ जाओ—और उस वक्त सुई न मिलती हो?

क्या यह अच्छा है कि जब शीशा मिले तो कङ्घी ग़ायब हो और कङ्घी मिले तो तुम तेल की शीशी ढूँढती फिरो? एक तरह की और एक जगह या एक समय काम आने वाली सब चीजें निश्चत स्थान पर साथ होनी चाहिएँ ताकि जब जिस चीज़ की ज़रूरत हो उठा ली जाय। चीज़े इस तरह रखी होनी चाहिएँ कि अँधेरे में भी बिना कष्ट के वहाँ से उठा ली जा सके। यह बात बड़ी खिझानेवाली है कि किताबों के ऊपर कपड़े पड़े हों और कपड़े रखने के स्थान पर ग्लास और तश्तरियां फैली हों या जहाँ खाना खाने की जगह है वहाँ कचरा या छिलका पड़ा हो और सोने की चारपाई के नज़दीक झाड़ू बिखर रही हो। न यही ठीक है कि भोजन के कमरे या भण्डारे

वह भयानक
विखरा घर!

मे हर चीज़ यो फैली हो जैसे वह घर छोड़कर घर वाले किसी दूर देश की यात्रा करने वाले हो। हर चीज़ ठिकाने और करीने से अपने स्थान पर, सजी हुई हो। बहुतेरे पति खुद बड़े अव्य-वस्थित होते है। कही किताबें छोड़ दीं, कही पैसे रख दिये, कही कपड़े बिखरा दिये। हजामत का सामान कहीं पड़ा है तो ज़रूरी कागज़-पत्र कही रख दिये गये हैं। अपने पति की यह कमी तुम्हे पूरी करनी पड़ेगी क्योकि ऐसा आदमी भी चाहता यही है कि उसकी पत्नी घर बनाने वाली हो, उसकी तरह उधेड़ने वाली नही।

तीसरा गुण, जो हर तरह के पति के साथ ज़रूरी है तुम्हारा स्वास्थ्य है। अगर स्त्री स्वस्थ न हुई तो मानो कुछ न हुई। तब वह अपने लिए भार, पति के लिए निकम्मी, संतान के लिए अभिशाप और समाज के लिए एक बोझ है। ऐसी स्त्री कभी अपने पति का दिल जीत न सकेगी। वह लाख कोशिश करे, कभी अपने पति को आकर्षित न कर सकेगी। ऊपर से दोनो मे चाहे जैसी बातें हो अन्दर से पति ऐसी स्त्री से दूर भागता है, आँख बचाता है। आखिर आदमी कब तक इस तरह का बोझ सँभाल सकता है ? कोई चीज़ पति के दिल को इतना नहीं उबाती जितना स्त्री का सदा बीमार रहना। पुरुष काम-काजी आदमी होता है; वह व्याह करके जीवन के संघर्ष के बीच मनोरंजन की आशा करता है और यह भी

स्वास्थ्य जीवन का मेरुदण्ड है

चाहता है कि पत्नी उसे घरेलू चिन्ताओं से मुक्त कर देगी। प्रत्येक पति तफसील की झंझटों से भागने वाला होता है। अगर ब्याह के बाद झंझटें इस तरह बढ़ने लगें कि मनोरंजन की जगह विवाह और उस विवाह से मिली स्त्री उस पर बोझ बन कर बैठ जाय तो वह खीझ उठता है। स्त्री के अस्वस्थ रहने से घर का प्रत्येक तंतु बिखर जाता है। बच्चे अलग अनाथ की तरह घूमते और बिलबिलाते हैं, नौकर-चाकर अलग उल्लू सीधा करते हैं। तब आदमी का दिल खिंचने लगता है और उसकी निगाहें दूसरी स्त्रियों की ओर उठती हैं।

पुरुष का ढङ्ग

अभी-अभी इस तरह का दृष्टान्त मेरे सामने आया है। मेरे एक सम्बन्धी हैं। कुछ दिन हुए इनके विवाह का निमन्त्रण मुझे मिला। निमन्त्रण पाकर मैं चकराया क्योंकि एक ही साल पहले उनकी शादी हुई थी। लड़की को ठोक-पीट कर उन्होंने शादी की थी। अच्छे धनी माँ-बाप की लड़की थी; देखने-सुनने मे अच्छी, रूप-रङ्ग से भी भली। एक दोष था—उसे मृगी के दौरे होते थे। माँ-बाप ने गृह-कार्य का सब खर्च भी देना मंजूर किया। कहा—एक ब्राह्मणी रख लो, हम लोग उसका खर्च देंगे। लड़की बेचारी इतनी भली कि खुद अपनी हालत पर रोती; कोशिश करती कि काम सँभाले, कुछ करे—कहती भी कि मेरे कारण उनको बड़ी तकलीफ होती है। ऐसी मधुर बोली कि क्या कहे!

फिर भी शादी का निमन्त्रण मेरे पास आ गया। मैं

शादी मे तो क्या जाता—मुझे ऐसी शादियाँ शादी के नाम पर व्यङ्ग सी लगती है और जब एक औरत घर मे बैठी हो दूसरी लाने की कोशिश में शरीक होना होश-हवास दुरुस्त रहते मेरे लिए असभव है। मेरे मित्र और सम्बन्धी इसे जानते हैं। फिर भी यह निमन्त्रण तो मेरे पास आ ही गया!

पर इन लोगो ने तो इसका समर्थन जोरो से किया। दबी जबान मेरे घर की औरतो ने भी किया और अभी उन सज्जन की एक बहन, संयोग-वश, मेरे यहाँ आई तो उन्होने भी कहा—आखिर कब तक इस तरह चल सकता है?

नीति की दृष्टि से इस सवाल का जो भी पहलू हो, हर मर्द अनुभव कुछ इसी तरह का करता है—'आखिर कब तक इस तरह चल सकता है?' सच है, बहुत ही कम मर्द होगे, जिनका इस तरह भी चल सके। यह हो सकता है कि पुरुष बहुत शिष्ट हो और दूसरी शादी न करे पर बीमार स्त्री के प्रति वह लगावट, वह रुझान, वह आत्मीयता, वह अन्तःसाख्य वह कभी नही अनुभव कर सकता जो पति-पत्नी के बीच होना चाहिए। उसका दिल उड़ा-उड़ा फिरता है।

वैसे भी इसमे कई प्रकार की शारीरिक और व्यावहारिक जटिलताएँ पैदा हो जाती हैं जिनको हर औरत समझती है इसलिए मै उनका जिक्र यहाँ छोड़ देता हूँ। इतना ही कहना बस है कि स्त्री का स्वास्थ्य वह धुरी है जिस पर सम्पूर्ण गृहस्थी का संसार घूमता है। इसलिए तुमको चाहिए कि तुम सबसे

पहले अपना स्वास्थ्य बनाओ। वैसे भी सुख-दुःख मे यह स्वास्थ्य ही तुम्हारे काम आवेगा, पढ़ना लिखना, ज्ञान और शिल्प सबसे अधिक काम की यही चीज़ निकलेगी।

मधुर और दिल जीतने वाली हँसी

चौथी चीज़ जिसे हर तरह का पति पसन्द करता है स्त्री का हँसमुख स्वभाव और उसकी मृदुता है। हँसमुख स्त्री गृह-जीवन का वह दीपक है जो जीवन के दुष्काल और अंधकार मे भी जलता रहता है। घिरते हुए बादल क्षण भर मे छँट जाते है और चाँदनी फैल जाती है। हँसमुख स्वभाव का यह मतलब नही कि तुम हमेशा ही-ही करती रहो। अगर ऐसा है तो बिल्कुल उलटा असर होगा। यह क्या कि जहाँ तुम्हे ज़रा गंभीरता रखनी है वहाँ तुम अट्टहास करने लगो, जहाँ सहानुभूति और समवेदना प्रकट करनी है वहाँ खिलखिला पड़ो। नही, हँसना भी मौके पर ही होता है। मेरा अभिप्राय इतना ही है कि वह स्त्री जो हर वक्त मातमी चेहरा बनाये रखती है, कभी सुखी नही हो सकती। अपना ही जीवन उसके लिए एक बोझ हो जाता है, दूसरो को वह क्या सुखी करेगी? तुम्हारा चेहरा हर वक्त गुलाब की तरह खिला होना चाहिए। जिससे मिलो, उसे ज़रा हँसाने की, प्रसन्न करने की कोशिश करो। वैसे भी हँसना स्वास्थ्य के लिए एक 'टानिक' है। जब तुम्हारे पति काम पर से घर लौटे, हँसते हुए उनका स्वागत करो, दो एक मीठी बात करो, उनकी सारी थकावट दूर हो जायगी।

अगर कोई मेहमान आवे तो स्थिति तथा मर्यादा के अनुसार उससे हँसो, बोलो, उसके सुख-दुःख पूछो; वह तुम्हारे सम्बन्ध मे बड़ी अच्छी सम्मति लेकर लौटेगी या लौटेगा। बच्चो से हँसकर दो मीठी बातें करोगी तो वे तुम्हारे गुलाम हो जायँगे।

पाँचवी बात जिसे तुम्हारे पति पसन्द करेंगे—फिर चाहे वे किसी श्रेणी के पति हो और ऊपर से कुछ भी कहते हो—

तुम्हारा साफ-सुथरा रहना है। कपडे-लत्ते सुरुचिपूर्ण वेश-भूषा का शौक रखने वाली स्त्री अक्सर पति की

प्यारी होती है। मर्द यह पसन्द करता है कि उसकी औरत को देख कर कोई यह न कहे कि क्या भुतनी को घर मे डाल रखा है, या कपडे-लत्ते से बेचारी को बड़ा कष्ट है। बात यह है कि पुरुप सामाजिक सम्मान का बड़ा ख्याल रखने वाला प्राणी है। वह चाहता है कि कोई उसकी तरफ अँगुली न उठाये और इसी से वह स्त्री के लिए अपनी हैसियत से ज्यादा खर्च करने की कोशिश करता है। तुम घर मे क्या खाती-पीती हो, किस तरह रहती हो, इसे कौन जानता है ? दुनिया तो ऊपर से देखकर ही तुम्हारे सुख-दुःख का अन्दाज़ लगाती है। अगर तुम्हारे घर मे सब कुछ भरा पड़ा है पर तुम बहुत मामूली कपड़े पहनकर सखी-सहेलियो के यहाँ या ब्याह-शादी मे या रिश्ते-नाते मे जाती हो तो लोग यही समझते है कि तुम्हारा गुज़ारा मुश्किल से हो रहा है, या तुम कष्ट मे हो या कंजूस हो। औरतो का ध्यान सबसे पहले

औरतों की वेश-भूषा पर जाता है। इसलिए तुम्हारा पति यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि तुम—जिसके लिए वह रातदिन खप रहा है—ऐसी वेशभूषा रखो कि लोगो को ग़लतफ़हमी का मौका मिले, लोग समझें कि तुम्हारा पति तुम्हे चार अच्छी साड़ियाँ भी नहीं देता। उलटे वह चाहता है कि तुम इस तरह रहो कि लोग जिस स्थिति मे तुम हो उससे अच्छी स्थिति मे होने का अंदाज़ लगायें।

यह आकर्षण व्यर्थ नहीं है !

वस्त्रभूषा का एक दूसरा—निजी—पहलू भी है। बात यह है कि पति-पत्नी के पारस्परिक सम्बन्ध मे शारीरिक आकर्षण का महत्व कुछ कम नहीं है। अधिकांश पतियों के लिए तो यह एक प्रधान वस्तु है। स्त्री को इसे समझना चाहिए कि पुरुष चाहे खुद कैसा ही मरियल और भोड़ी सूरत का हो चाहता वह यही है कि स्वर्ग की अप्सरा उसे मिल जाये। वह केवल स्त्री के गुणों का ही भूखा नहीं होता, उसके रूप का भी प्यासा होता है। तुम कहोगी, यह कैसे संभव है कि हर स्त्री अप्सरा हो और विवाह तो प्रायः हर औरत को करना ही है। यह ठीक है कि हर औरत सौन्दर्य की देवी नही होती, न सबको ऐसा रूप ही प्राप्त होता है कि देखते ही मर्द लोटन कबूतर बन जाय। पर इसके साथ स्त्री के यौवन में पुरुष को प्राकृतिक रूप से ही एक आकर्षण का बोध होता है। इस शारीरिक आकर्षण के कुछ गंभीर प्राकृतिक कारण होते हैं। शरीर मे कुछ ऐसे द्रव

और रस बनते हैं कि दुनिया रंगीन और सुन्दर दिखती है। यद्यपि हर स्त्री उर्वशी और रंभा नहीं होती परन्तु आन्तरिक रूप से हर स्त्री मे उर्वशी और रंभा का आकर्षण होता है; उसमे एक मोहनी होती है जो यौवन काल के आरभ मे उसमे एक नशा पैदा कर देती है और इस नशे से न केवल वह पुरुष को वश मे करती है बल्कि इससे आत्म-समर्पण का कठिन कार्य भी सरल हो जाता है। स्त्री को जो मोहनी मिली है, वह उसके स्त्रीत्व और मातृत्व की एक बड़ी पूंजी है। उचित है कि हर औरत इसे समझे, अपनी इस जादू डालने की शक्ति को वहुत समझ-बूझकर खर्च करे; उसे अधिक से अधिक दिनो तक सुरक्षित रखे और बाह्य साधनो से, शृंगार और प्रसाधन से भी, एक सीमा तक, बढ़ाने की कोशिश करे। वस्त्र-भूषा से इस कार्य मे उसे सहायता मिल सकती है। एक स्त्री मामूली कपड़े को भी ऐसे अच्छे और आकर्षक ढंग से पहनती है कि दिल खुश हो जाता है, दूसरी पचास की साड़ी को भी ऐसे भद्दे ढंग पर पहनती है कि देखकर खीझ उठती है। अगर नारी को रंगो के चुनाव और मिश्रण का भी ज्ञान हो तो क्या कहना? पहले की स्त्रियाँ इसे जानती थी। तुम्हे जानना चाहिए कि किस रंग की साड़ी तुमपर खिलती है, या किस रग की साड़ी पर कैसा ब्लाउज़ वा जम्पर पहनना चाहिए। आँखो मे हँसी, ओठो पर मधुर मुस्कान, शरीर के अंग-अग मे खेलता और दौड़ता हुआ स्वास्थ्य तथा यौवन, और इन सब के आकर्षण को बढ़ाने-

वाली वेशभूपा, पहनने-ओढ़ने मे सुरुचि और समयानुसार परिवर्तन इसे जानने वाली स्त्री सहज ही अपनी उस मोहनी को दीर्घकाल तक बना रखने मे सफल होती है जो उसने एक दिन विवाह के आरंभ काल में अपने पति पर डाली थी। जो कुछ तुम्हे मिला है उसे बना-सँवार कर रखो।

इनके अलावा एक और वात मै तुमको वता दूँ क्योंकि इसके विना पुरुपो की आदत की पूरी जानकारी तुम्हे न होगी।

वात्सल्य की प्यास

हर एक पति जहाँ यह चाहता है कि उसकी स्त्री उसकी जीवन-संगिनी वन कर रहे तहाँ वह यह भी चाहता है कि वह जरूरत पड़ने पर अपने अन्दर जो मातृत्व है उसका लाभ भी उसे दे। जव पुरुप दुःख और कष्ट मे होता है, जव वह वीमार पड़ता है तो सदा उसे माँ की याद आती है। आश्रय के लिए उसका दिल तड़पता है। ऐसे मौको पर वह चाहता है कि उसकी स्त्री न केवल वेटी की भाँति उसकी सेवा और पत्नी की भाँति उसे अपने प्रेम का अश्वासन दे वल्कि माता की भाँति उसे अपनी ममता की छाया तले ले ले। वीमार मर्द चाहता है कि पत्नी उसका सिर गोद मे रख कर सहलाये, उसे धीरज बँधाये और वार-वार कहे कि जव कोई उसका न रह जाय तव भी वह उसकी है। पुरुष स्त्री के आगे सदैव वच्चा है और यही स्त्री की शक्ति का रहस्य है। जो स्त्री इसे समझती है कि उसे समय-समय पर वेटी, वहन,

जीवन-संगिनी और माता सवके पार्ट करने है वही विवाहित जीवन मे सफल होती है। फिर स्त्री को न केवल आचरण से ये पार्ट करने होंगे बल्कि उसके साथ वाणी का भी उपयोग करना होगा। पुरुष की आदत है कि स्त्री का प्रेम और सेवा पाकर ही वह संतुष्ट नही हो जाता, वह चाहता है कि वार वार स्त्री उसे अपने प्रेम का आश्वासन देती रहे; वार-वार कहती रहे कि मै तुम्हारी हूँ और तुम्हीं को लेकर मेरा अस्तित्व है; बार वार कहती रहे कि तुम्हारे चरणो मे आश्रय पाकर मै धन्य हो गई हूँ और तुम्हारे विना जीवन की कल्पना ही संभव नही है। मानव-सम्वन्धो का आधार कुछ ऐसा जटिल और वनावटी हो गया है कि केवल ईमानदारी ही सुखी जीवन विताने के लिए पर्याप्त नहीं है। ईमानदारी के साथ ईमानदारी का अभिनय करने की भी जरूरत पड़ती है। विवाहित जीवन मे तो यह अभिनय वहुत ,आवश्यक है। क्योंकि 'अनवोला' प्रेम पाकर तृप्त हो जाने वाला प्राणी यह पुरुप नही है। वह स्त्री के मुख से वार वार उस प्रेम की घोषणा भी चाहता है। इससे उसका अहङ्कार तृप्त हो जाता है। उसके दिल की कली खिल उठती है और वह एक प्रकार के विजयोल्लास का अनुभव करता है। समझता है कि कोई औरत मेरी भी है—सर्वथा मेरी, जिसके हृदय पर मेरा अधिकार है, और जिसकी जिन्दगी मेरे जीवन के तारो से वँधी है। यह अनुभव पुरुप को पागल वना देने को काफी है।

मै यह नहीं कहता कि जो उपाय मैंने बताये हैं, वे रामबाण हैं। इस प्रकार की बातें करना महज़ मूर्खता है। पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इन बातों का कुशलतापूर्वक पालन करने से अधिकांश पत्नियाँ अपने पतियों को वश में रख सकती हैं।

मुझे आशा है कि जो कुछ मैंने लिखा है वह तुम्हारे लिए उपयोगी सिद्ध होगा और तुम उनके सहारे अपने भावी जीवन की नौका सफलतापूर्वक खे सकोगी।

[८]

सुखी विवाहित जीवन का रहस्य

प्रिय कान्ता,

आज तुम्हें कुछ और जरूरी बातें लिखना चाहता हूँ। तुमने मेरे पिछले पत्र का उत्तर नहीं दिया। ऐसा तो कभी न होता था। मुझे भय है, कहीं तुम बीमार तो नहीं पड़ गईं।

विवाह जुआ है

दुनिया मे सदा से कहा जाता रहा है कि विवाह एक जुआ है; कौड़ी पड़ गई तो लाखों अपने हैं, नहीं तो जो कुछ था वह भी पराया है। और जुए में कौन जानता है कि कौड़ी किधर पड़ेगी। कोई पुरुप नही जानता कि उसे हंसिनी मिलेगी या भोंड़ी गिलगिलिया और न कोई लड़की जानती है कि उसके भाग्य में हंस है या कौआ। किस्मत ने साथ दिया तो जिन्दगी प्रकाश से पूर्ण हो गई, और पासा उलटा पड़ा तो फिर अँधेरा ही अँधेरा है।

पर एक कला भी है

पर मेरा ख्याल है कि इस वक्तव्य मे केवल आंशिक सत्य है। विवाह जहाँ एक जुआ है तहाँ एक कला, एक जीवन-शैली, एक विज्ञान भी है। असल मे विवाह एक आश्चर्यजनक सौदा है। तुम सोचो तो खुद इसे अनुभव करोगी। क्या यह अश्चर्य-जनक नही कि विवाह करते ही जो पराये थे, अपने हो जाते हैं और जो अपने थे, वे दूर पड़ जाते है। भले ही एक नई बहू

अपने माता-पिता से विछुड़ते हुए रोये पर जो अपनापन, जो निजत्त्व और गोप्य विश्वसनीयता उसे अपने पति के निकट अनुभव होती है वह माता-पिता के यहाँ भी अब अनुभव नही होती। देन-लेन सब मे यही भाव रहता है कि अमुक क्या कहेगे, अपने घर मे जैसे रह लूँ पर भाई-वहनो तथा अन्य लोगो के सामने तो ऐसा करते नही वनेगा कि हेठी हो।

कैसा परिवर्तन !

अभी कुछ ही दिन पहले की वात है कि एक लड़की की शादी हुई। यह एक हठीली लड़की थी और हम इसे भलीभांति जानते थे। जव-जव विवाह के विषय मे उसकी राय जानने की चेष्टा की गई, वह मौन रही या उसने टाल दिया। माता-पिता ने विवश हो कर एक पढ़े-लिखे युवक से उसकी शादी तै कर दी। मुझे भी इस शादी मे जाना पड़ा था। वहाँ मैंने देखा कि लड़की इस शादी के विल्कुल विरुद्ध थी और उसने खाना-पीना तक छोड़ रखा था। वह इसके लिए माता-पिता को कोसती थी तथा जिससे शादी हो रही थी उसके सम्वन्ध मे भी अनेक अप्रिय वातें कहती थी। मैंने उसे समझाने की चेष्टा की और इस तरह की वातो से उसे विरत करना चाहा पर पूरी तरह असफल रहा। वह जली वैठी थी और यो वातें करती थी मानो कब्र मे उसे गाड़ने की व्यवस्था की जा रही हो। वह वरावर कहती रही—जहर दे देना इससे ज्यादा अच्छा होता। मुझे वह अपना हितैषी मानती थी इसलिए वार-वार मुझसे

कहती—आपने भी मेरी रक्षा न की। अब मै क्या बचूँगी और यह कि इस जिन्दगी से मौत बेहतर है।

पर विवाह होना था और हो गया। इस लड़की के पत्र मेरे पास अक्सर आया करते थे पर विवाह के बाद उनमें आश्चर्यजनक कमी आ गई। एक बार उसने सफाई देते हुए लिखा—"छुट्टी कम मिलती है। काम-काज मे समय निकल जाता है। अब तो मन-तन इन्हीं लोगो मे फँस गया है। चाहे जैसे हो ये अपने हैं और इन्हीं मे जिन्दगी गुज़ारनी है।"

इस लड़की ने जो लिखा और जो अनुभव किया वही प्रायः सब स्त्रियाँ अनुभव करती हैं। स्वभावतः स्त्रियाँ अधिक यथार्थ-वादिनी होती हैं और स्थिति को पुरुष से कही जल्द समझने और ग्रहण करने वाली। अपने 'घर वाले' के प्रति, विवाह, के साथ ही, एक अद्भुत् अपनापन वे अनुभव करने लगती हैं। कल तक जहाँ जाने मे दिल हिचकता था, अब विपदा मे वहाँ दौड़ता है। तब माता-पिता का घर पराया हो जाता है और पति का नया-नया घर अपना।

हृदय के, स्थिति और मर्यादा के एकीकरण की यह अनु-भूति गृहस्थ जीवन की धुरी है। इसी को लेकर सब कुछ बनता और बिगड़ता है। जो स्त्रियाँ इसका उचित उपयोग कर सकती है वे कौए के साथ भी सुखी हो जाती हैं; जो इसका उपयोग नहीं कर सकतीं उनके लिए हंस भी तृप्तिकर नहीं हो सकता।

दुनिया मे ज्यादातर स्त्री-पुरुष सामान्य मनःस्थिति वाले होते हैं। न एक दम ऊँचे, न एक दम नीचे। न पुरुष राक्षस होता है, न स्त्री देवी। दोनो मनुष्य होते है, दोनो मे गुण भी होते है, कमजोरियाँ

अनुकूल मनःस्थिति

भी होती है। बहुत कम पति ऐसे होगे जो विवाह के बाद एक बार अपनी पत्नियो की ओर एकदम आकर्षित न हो। मामूली तौर पर पति भी पत्नी का हार्दिक प्रेम पाने को उतना ही विकल होता है जितना पत्नी अपने पति का प्रेम पाने को विह्वल होती है। परम्परा ने विवाह-विधि को एक अजीब रहस्य से भर दिया है इसलिए जब दो नये प्राणी एक दूसरे का हाथ पकड़ कर देवता एवं अग्नि के सम्मुख वफादार रहने की प्रतिज्ञा करते हैं तो वह प्रतिज्ञा चाहे कितनी ही रटी हुई हो, हृदय मे एक नवीन भाव की अनुभूति, कम से कम एक बार, होती अवश्य है! इस अनुभूति मे दो शरीर, दो प्राण एक हो जाते है: एक विचित्र सिहर से शरीर कम्पित हो उठता है। दोनो दोनो के निकट आने को उत्सुक होते है, दोनो दोनो को अपनाना चाहते है, समझना चाहते है। और अनुभव करते है कि अब तक चाहे जितनी स्वच्छन्दता जीवन मे रही हो पर अब एक नई ज़िम्मेदारी उन पर आ गई है।

तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस भावना का उचित लाभ उठा लो। अपना हिस्सा वफादारी, ईमानदारी और कुशलता के साथ

भावना का लाभ उठालो

पूरा करो। ज़रा सी मधुरता, कर्त्तव्य-शीलता, परिश्रम और सेवा से तुम अपने भविष्य को सुखमय और सुरक्षित बना सकती हो। कल्पना करो कि उस नये प्राणी को, जिसे व्याह कर तुम्हारे पति लाये हैं, देखने के लिए उनमे कितनी उत्कण्ठा होगी। यह प्रथम मिलन, प्रायः एक ही दिन में, विवाहित जीवन के भविष्य का निर्णय कर देता है। यदि इस घड़ी, जब हृदय के मधुर भार से पलकें झुकी जाती हों और जब जीवन की सतह पर एक स्वप्न तैरता हो, तुमने अपने कौशल से पति पर अच्छी छाप डाल दी तो तुम्हारा बेडा पार है और अगर इस समय खीचातानी, एक दूसरे से खिंचावट, ग़लत वर्ताव, या वातचीत से कोई ग़लती हो गई तो समझो तुम्हारी ज़िन्दगी पहाड हो जायगी।

इसलिए विवाह के वाद जब तुम पहली वार पति से मिलो तो चेष्टा करो कि वह मिलन एक परम्परा, एक रिवाज, एक विधि का पालन मात्र वनकर न रह जाय।

गरम लोहे पर चोट

जब लोहा गरम होता है, उसे मनमाने रूप में मोड लिया जा सकता है। जब तुम्हारे पति तुम्हारे निकट उत्कण्ठित और भिक्षार्थी है तब तुम अपने समस्त सद्गुणो की एकत्र छाप उनपर, आसानी से, डाल सकती हो। मैं मानता हूँ, तुम पहली वार उनसे मिल रही हो—उनसे जिनको शायद ही कभी तुमने देखा है, और अगर संयोग-

वश देख भी लिया है तो उनको जानती तो बिल्कुल नहीं हो। इसीलिए तुम्हे अपनी सम्पूर्ण शक्ति का उपयोग उनको अनुकूल और वशीभूत करने के लिए करना चाहिए।

जो कुछ वे पूछे उनका संकोच के साथ पर स्पष्ट उत्तर दो। नम्रता और मधुरता तुम्हारी वाणी मे हो, लज्जा चेहरे पर और आँखो मे। बातचीत का सिलसिला अपने

क्रिया की भाषा मे आप आरंभ हो जाता है। कुशल स्त्री कही अपने पति का पॉव दबाने लगती है, कभी सिर दबाने बैठ जाती है। इसका मतलब भी गुलामी नही, जैसा आज कल की भाषा मे कहा और समझा जाता है। जब औरत की ज़बान न खुल रही हो तो इन क्रियाओ द्वारा ही वह मानो बोलती है। यह दासता नही, उसका 'टैक्ट'—कौशल—है। इस एकान्त मे तुम अपनी सेवा वृत्ति, अपनी मधुरभाषिता, अपने शील, अपने मीठे और सेवापरायण स्वभाव का क्रियात्मक परिचय पति को दो। शुरू के आठ-दस दिनो का प्रभाव सम्पूर्ण विवाहित जीवन भर बना रहता है। इन दिनो मे तुम्हे अपने पति के ऊपर पूरा ध्यान रखना चाहिए। वे क्या चाहते हैं, क्या खाते-पीते है, किन बातो को पसन्द करते हैं, घर मे किनको चाहते हैं, उनकी आर्थिक स्थिति क्या है, क्या कठिनाइयॉ उन्हे है, किन बातो से सुखी होते है, किन से दुखी—इन सब की सूक्ष्म और गहरी देखरेख तुम्हे रखनी चाहिए और अपने काम तथा बातचीत से उनके दिल पर यह छाप बैठा देनी चाहिए कि तुम

उनकी स्थिति को, उनकी कठिनाइयों को न केवल समझती हो बल्कि उनमें भाग लेने को भी तैयार हो। उपयुक्त कौशल और बातचीत द्वारा तुम बहुत अधिक सफलता प्राप्त कर सकती हो। जैसे यदि तुम्हे मालूम है कि तुम्हारे पति बहुत पैसे वाले नहीं हैं, या हो तो भी, उनके कोई मूल्यवान उपहार देने पर प्रेम-पूर्वक और अपनेपन के भाव के साथ उनसे कहो—"इसकी क्या ज़रूरत थी, मेरे लिए सर्वोत्तम उपहार आप ही है। आप सुखी रहे, बस मेरे सब हौसले पूरे समझिये।" या— "मै और कुछ नहीं चाहती केवल आपकी सेवा करके कृतार्थ होना चाहती हूँ।" या—"मै आपके योग्य नहीं, पर आपके साथ भगवान ने मुझे बाँध दिया है तब मुझे कृपापूर्वक निबाह लीजिए। आप जिससे सुखी हो, वही आज्ञा मुझे कीजिए। मुझमे बुद्धि नही पर आपके सुख के लिए अपने प्राण देने मे भी मैं अपने को धन्य मानूँगी।" इन चन्द शब्दों से तुम वह सफलता प्राप्त कर सकती हो जो वर्षो के परिश्रम से दुर्लभ है। इससे पुरुष-हृदय तृप्त और सन्तुष्ट हो जाता है। और तुम उसे अपने प्रेम और सेवा से अङ्गुलियों पर नचा सकती हो।

लुभावनी बाते

एक स्त्री को मैं जानता हूँ। बड़ी भली, यानी वफादार औरत है। शृङ्गार-पटार मे नहीं रहती; गहने-कपड़ो का भी उसे कुछ ऐसा शौक नहीं। अच्छे खानदान की होकर भी गरीबी मे गुज़र करने को तैयार। यदि संकुचित अर्थ मे कहा जाय तो

उसे सच्चरित्रा कहेंगे। कभी किसी पर पुरुप की तरफ उसने आँखें नही उठाई। रात दिन, अपनी शक्ति से अधिक, घर के काम-काज मे लगी रहती है। फिर भी उसे जीने की कला नही मालूम है' वह नहीं जानती कि ये जो उड़ने वाले मर्द है किस तरह वश मे किये जा सकते है। फलतः वह खुद भी दुखी है और उसका पति भी दुखी है। दोनो असन्तुष्ट, अतृप्त, खोये हुए। ज़रा-ज़रा सी बात मे झगड़ा हो जाता है। असल मे विवाहित जीवन की सफलता मे यद्यपि ईमानदारी का महत्व बहुत है फिर भी सबसे ज़रूरी चीज़ है स्वभाव और कौशल। एक चरित्रमती स्त्री की अपेक्षा एक चतुर, मदुस्वभाव वाली स्त्री के विवाहित जीवन मे सफल होने की अधिक आशा की जा सकती है।

स्वभाव और कौशल का महत्त्व

परसाल मैंने दो बहनो की शादी देखी। इनमे एक अधिक चरित्रमती थी। इसे 'क' कह लीजिए। दूसरी वैसी न थी—उसे 'ख' कह लीजिए। अब 'क' का जीवन दुःख और रोने से भरा हुआ है। और 'ख' सुखी, पति की प्यारी है—जहाँ जाती है वही चार सहेलियाँ वना लेती है। उसे लगता है, दुनिया प्रेम और सुख से भरी हुई है। उसे कभी इकलेपन का अनुभव नहीं होता। जिन्दगी अच्छी तरह बीत रही है और श्रीमती 'क' है कि सदा अपने भाग्य का रोना रोती रहती है। दुनिया मे उनको बाप से शिकायत है, माँ से शिकायत है,

श्रीमती 'क' और 'ख'

सास-ससुर से शिकायत है। ननदें उनको नहीं सोहातीं और जेठानियों को देखकर वह मुँह बिचकाती हैं। उनकी शिकायत है कि सगे-सम्बन्धी कोई उनकी परवा नहीं करते। 'दुनिया मे कौन किसका है?' मतलब सारी दुनिया उनके लिए दुःख से भरी है, उन्हें सब से शिकायत ही है। ऐसी स्त्री यदि चरित्रमती हुई तो भी क्या? वह गृहस्थ जीवन के लिए स्पष्ट एक अभिशाप है। वह न स्वयं सुखी होगी; न दूसरो को सुखी करेगी; न खुद हँसेगी, न दूसरो को हँसने देगी। इस चरित्रमती को लेकर पति क्या करेगा? घर के लोग इसका क्या बनायेंगे? यह जहाँ जायगी वहाँ के वातावरण को दुःख और विपाद से पूर्ण कर देगी।

सफल स्त्रियाँ

मैने जीवन मे इसके कितने ही उदाहरण देखे है कि एक चरित्रमती परन्तु स्वभाव से सख्त या छुई-मुई स्त्री की अपेक्षा एक अपेक्षाकृत कम चरित्रमती पर मधुर स्वभाव रखनेवाली और स्थिति तथा कर्तव्य को समझने वाली स्त्री विवाहित जीवन मे अधिक सुखी तथा सफल हुई है। तीन ऐसी लड़कियो को मैं जानता हूँ जिनके चरित्र मे विवाह के पूर्व कुछ कच्चेपन का प्रमाण मिला; इधर-उधर बहक गईं पर विवाह होने पर वे बड़ी अच्छी और सफल पत्नियाँ निकलीं। इनका स्वभाव मृदुल और रसमय था। वह मृदुलता एक क्षण के लिए स्थान-भ्रष्ट होकर ग़लत मार्ग पर चली गई पर ज्योंही इसे अपने स्थान का पता लग गया और ज्योंही उसे रास्ता मिल गया वह अमृत बन गई।

सूखी, काष्ठवत्, बहुत बनने वाली और कट्टर औरते विवाहित जीवन में सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं कर सकतीं। इसलिए उचित है कि तुम चरित्र के साथ स्वभाव की मृदुता पर भी ज़ोर दो। अगर तुम मीठा बोलती हो, समय पर काम करती हो, ज़रूरत के वक्त सेवा करने का महत्व जानती हो तो तुम एक अच्छी पत्नी सिद्ध होगी। जो औरत हँसना और मुस्कराना जानती है दु:ख और असफलता का दंश उसके कलेजे मे कभी चुभ नहीं सकता। हँसने से बढ़ कर मन की काई काटने वाली दूसरी चीज़ नहीं। जैसे मोती मे आब है वैसे ही जीवन मे हास्य है। इसलिए सच्चरित्र पर स्वभाव की कर्कशा या झगड़ालू स्त्री से, चरित्र मे कुछ कम कट्टर पर मधुर स्वभाव की स्त्री सदा अच्छी जीवन-संगिनी सिद्ध होती है। मै अपने एक मित्र को जानता हूँ जिनकी स्त्री संकुचित अर्थ मे अत्यन्त सच्चरित्र है—धार्मिक विचार की, पूजा-पाठ करने वाली। हमारे ये मित्र बड़े ही परिश्रमी, दुनिया देखे हुए और शीलवान व्यक्ति हैं। पर बीस-पचीस वर्ष मे उनका जीवन हाहाकार से भरा है। उनके लिए पत्नी का होना न होना एक जैसा है बल्कि अगर यह औरत न होती तो उनका जीवन कही सुखी और तृप्त होता।

सास का आदर

यदि तुम्हारी सास है तो उसे माता मानकर चलो। आजकल बहुत कम घर ऐसे बच गये हैं जहाँ सास-बहू मे बनती हो; अक्सर विवाह होते ही घर टुकड़े-टुकड़े हो जाते है। मै जानता हूँ, इसमें सदा दोष स्त्री के ही

संस्कार, मन का नहीं होता। स्वभाव, सिद्धान्त, परिस्थिति, आवश्यकता सभी इसके निर्णय मे भाग लेते हैं। पर जहाँ तक हो सास-ससुर तथा घर के अन्य प्राणियों से अच्छा सम्बन्ध रखने मे तुम्हारा लाभ है। अगर ससुराल मे जाते ही अपने पति पर तुमने यह आभास डाल दिया कि तुम एक झगड़ालू औरत हो और आते ही तुमने एक समस्या खड़ी कर दी तो घर का भविष्य जो हो, तुम्हारा भविष्य भी बहुत अच्छा न होगा। यह ठीक है कि स्त्री का पति पर एक विशेष अधिकार है और जब तुम्हें ब्याह कर तुम्हारे पति लाये है ,तब तुम्हारी मर्यादा और सुविधा का ध्यान भी उन्हें रखना चाहिए पर विवाह का यह मतलब भी नहीं कि तुम्हारा तुम्हारे पति पर सर्वाधिकार हो गया। जैसे वे तुम्हारे पति है वैसे ही किसी के बच्चे भी हैं, किसी के भाई भी हैं। उन सबके प्रति उनका कुछ कर्तव्य है। तुम्हारे लिए उचित है कि तुम उस कर्तव्य-पालन मे सहायक बनो, बाधक न बनो। हर औरत अपने अनुभव से जानती है कि अगर उसके माता-पिता के बारे मे पति भी कोई आक्षेप-युक्त बात, फिर चाहे वह सच्ची ही क्यो न हो. कह दे तो उसको बहुत बुरा लगता है। तब उसे पति के माता-पिता के विषय मे क्यो न बहुत सॅभाल कर बोलना, और बहुत सॅभालकर वर्ताव करना चाहिए ? याद रखो कि तुम्हारी सास उसी व्यक्ति की माँ है जो आज तुम्हारे जीवन का सब कुछ है: जब तुम नहीं थीं तब दु:ख मे, कठिनाइयों में, आपदाओं और संकटों मे उसी माँ ने तुम्हारे पति की

सेवा और रक्षा की है; आज जो कुछ वह है उसी माँ के कारण है। तुम्हारे लिए उचित है कि तुम उसके प्रति विनीत और कृतज्ञ भाव रखो। यथा-सम्भव उसकी सेवा करो; उसे अपनी माँ समझ कर चलो। इसके अलावा छोटे-बड़े सभी कुटुम्बियो के प्रति तुम्हे मर्यादा के अनुकूल व्यवहार करना चाहिए। अपनी तरफ से कोई ऐसा मौका न देना चाहिए कि विभेद बढ़े। याद रखो प्रेम ही जीवन का अमृत है और जहाँ विभेद है तहाँ प्रेम टिक नही सकता।

बेकारी मृत्यु है !

आजकल की बहुएँ प्रायः निठल्ली बैठने को अमीरी और सुख का साधन समझ लेती है। वे चाहती है कि नौकर घर का सारा काम-काज करें और वे केवल जब-तब निर्देश करती रहे। जो स्त्री यह चाहती है वह मानो दूसरो की आँखो से देखना और दूसरो के पावो से चलना चाहती है। कभी न भूलो कि आलस्य और निठल्लेपन से बढ़कर जीवन के तंतुओ को काटने वाली दूसरी चीज नहीं है। यह बड़ा घातक विष है—ऐसा विष जो देखने मे अत्यन्त मनोमोहक और स्वाद मे मीठा है पर जो जीवन की शक्ति को चूस लेता है, उसकी धमनियो को सुखा देता है। सदा किसी काम मे लगी रहो। अन्यथा किसी दुर्बल घड़ी मे तुम्हारा मन तुम्हे दबोच लेगा। निठल्लेपन मे नशा है; परिश्रम मे जीवन और शक्ति की अनुभूति है। काम-काजी स्त्री जीवन के अनेक दुखो से बच जाती है। क्योकि अगर कोई बात सामने

आई भी तो वह उसे भुला कर अपने काम में लग जाती है। उसे रोने और तिल का ताड़ बनाने की फुर्सत ही नहीं, जब बेकार औरत का मन दुश्चिन्ताओ और बेकार बातों से भरा रहता है और वह जरा जरा सी बात को तूल दे देकर दुखी होती है। ऐसी घड़ियो मे, जब वह अपना रोना और हाय-हाय लेकर बेखबर होती है, अक्सर शैतान चुपके चुपके उसके मन में साधारणतः अज्ञात और गुप्त मार्ग से प्रवेश करता है। और जब उसे होश आता है तब वह इतनी आगे निकल गई होती है कि लौटना, चाहने पर भी, असंभव हो जाता है। इसलिए तुम भूलकर भी उस बेकारी को आशीर्वाद न समझना जिसका सपना आराम-पसन्द औरते और लड़कियाँ देखती हैं।

धैर्य ही सखा है

एक बात और कहना चाहता हूँ। ज्यों-ज्यों दिन बीतते जायँगे जीवन में नई समस्याएँ और नई कठिनाइयाँ पैदा होती जायँगी। इनसे घबड़ाना नहीं चाहिए; धीरज और शान्ति के साथ उनका सामना करने मे ही तुम्हारा कल्याण है। कठिनाइयो मे रो देने वाली स्त्री अपना कुछ कल्याण नहीं करती। अभी क्या, आगे तुम माता होगी, तब अनेक झंझटे पैदा होगी। अधिकांश स्त्रियाँ बच्चों के लिए लालायित रहती है। जो औरत यह कहती है कि उसे सन्तान की अकांक्षा नही, वह झूठी है या फिर औरत नही है। शरीरशास्त्र, मानसशास्त्र और धर्मशास्त्र सभी के विचार से स्त्रीत्व की परणति मातृत्व मे ही है। सम्पूर्ण सृष्टि मे प्राणियो

का संयोग इसी उद्देश्य से होता है। मैंने अनेक फैशनेबुल आधुनिकाओं को देखा है जो अपने झूठे यौवन की रक्षा के लिए कृत्रिम साधनों का अवलंबन लेती और सन्तति से दूर हैं। पर इनके जीवन में भी एक अतृप्ति भरी है। या तो उनका स्त्रीत्व विकृत हो गया है या फिर दिल में वे दूसरों के सुन्दर बच्चों को देखकर हाय करती हैं। स्त्री का माता रूप ही उसके गौरव का चरम विकास है। इसी रूप में वह जगत् की शक्ति का केन्द्र है। इसी रूप में वह उद्भवकारिणी है। इसलिए मातृत्व की अनुभूति बिना उसका जीवन सूना है। लाखों पढ़ी-लिखी औरतें बच्चा न होने पर इलाज कराते-कराते परीशान हैं; अशिक्षित स्त्रियाँ टोना-टोटका सब कुछ करती हैं। मतलब यह कि सन्तति की आकांक्षा एक प्राकृतिक आकांक्षा है।

जगत् की शक्ति का केन्द्र

पर बच्चों के होते ही गृहस्थ जीवन की कठिनाइयाँ बहुत बढ़ जाती हैं। उनके पालन-पोषण में माँ का बहुत समय निकल जाता है। शरीर भी क्षीण पड़ता जाता है। बीमारी तथा एक न एक झंझट लगी रहती है। स्वाभाविक है कि तब स्त्री अपने पति की ओर उतना ध्यान नहीं दे पाती जितना पहले देती थी। अक्सर अनुदार पतियों द्वारा इसका गलत अर्थ लगाया जाता है। इसलिए मातृत्व और स्त्रीत्व का यह संधिकाल भी तुम्हारे लिए एक खतरे का समय है। यदि तुम अपने कौशल से अपने पति का अनुराग बनाये रख सकीं तो तुम्हारी नाव पार लग

जायगी। ऐसा न होने दो कि बच्चे तुम्हारे और तुम्हारे पति के बीच खाईं बन जायँ। उन्हे दोनों के प्रेम की परणति का प्रतीक बनाओ; वे वह बिन्दु बने जहाँ आकर दोनो के जीवन मिलते है। अगर तुम कुशल पत्नी हो तो बच्चो के द्वारा पति और अपने हृदय के बन्धन को और दृढ़ कर लोगी।

प्यारी बहनो और बेटियो! अगर तुम इन बातो पर अमल करोगी और कौशल से काम लोगी तो तुम्हारे जीवन पर प्रेम की शीतल चाँदनी छा जायगी। तुम्हे प्रेम का नशा न चाहिए, प्रेम का अमृतत्व चाहिए। प्यास और छलना का जीवन छोड़ दो और तृप्ति तथा विश्वास के साथ जीवन मे प्रवेश करो। हे घर की रानी! तुम्हारा मङ्गल हो। दिशाएँ तुम्हारी दिव्य ज्योति से प्रकाशित हो; समाज तुम्हारे वरदान से गौरवान्वित हो; संसार तुम्हारे स्नेह-सन्देश से मुखरित हो। हे मङ्गलमयी! तुम्हारी जय हो।

साधना-खण्ड : समस्याएँ और हल

[६]

वसन्त की कलियाँ

प्रिय कान्ता,

कई पत्र मैं तुम्हे लिख चुका हूँ और उनमे गृहस्थ-जीवन के अनेक चित्र तुम्हें मिलेंगे। वहुत-सी ऐसी वातें भी मिलेगी जिनका अनुसरण करके विवाहित जीवन सुखी वनाया जा सकता है। इस पत्र में मैं सिलसिले से कुछ जरूरी वातें वताना चाहता हूँ।

हिन्दू विवाह केवल भोग-विलास और निजी सुख के लिए नही है। यह ठीक है कि यौवन काल आकांक्षाओं और अभिलाषाओं से पूर्ण होता है। उसमे उमंगें उठती है। मन एक साथी ढूँढ़ता है। किसी के सपने आते हैं। कुछ अभाव मालूम पड़ता है और उस अभाव की पूर्ति के लिए अनेक अस्पष्ट भावनाये आती और जाती हैं। एक अजव-सी वेचैनी होती है। शरीर मे अनेक परिवर्तन होते हैं।

यौवन का वसन्त

इन आकांक्षाओ की पूर्ति के लिए एक समाज और धर्म से अनुमोदित साथी चाहिए। विवाह से इस प्रकार का साथी मिलता है। पर क्या केवल इन पारस्परिक अभिलाषाओ की पूर्ति ही विवाह का उद्देश्य है? नही, स्त्री मानव जाति की माता है। उसकी धारा को सूखने न देने के लिए ही मुख्यतः उसका निर्माण हुआ है। समाज को उत्तम सन्तति का दान करना उसका धर्म

है। इसीलिए हिन्दू धर्म मे विवाह एक धार्मिक और सामाजिक महत्व का कार्य है। विवाह के पूर्व प्रत्येक कन्या को अपने शरीर और मन का समुचित निर्माण कर लेना चाहिए।

जो लड़की सुखी विवाहित जीवन विताते हुए पति, कुटुम्ब, देश और समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यो का पालन करना चाहती है, उसे इन बातो को समझना

वही तुम्हारा घर है

चाहिए। सबसे पहले तो उसे पतिगृह मे जाते ही उसे यों अपनाना चाहिए कि मानो युग-युग से वही उसका घर है। माता-पिता के घर को सदा के लिए छोड़कर एक नये घर मे जाने पर शंका, भय, अस्पष्टता, और संकोच का होना स्वाभाविक है; दुःख भी होता है। पर जब तुम जानती हो, रहना वहाँ है, जीवन वहाँ व्यतीत करना है, घर भी वही है तब बुद्धिमानी यही है कि लड़की अपने दिल को वश मे रख कर जितनी जल्द हो सके अपने काम मे लग जाये। अक्सर विवाह के बाद के कुछ दिनो मे ही बहुओ की क़िस्मत का फैसला हो जाता है। इसलिए इन दिनो को रोने-धोने मे बिता देना मूर्खता है। समाज मे सभी तरह के आदमी हैं। भयङ्कर और खराब स्वभाव की सासें है जिन्हे जान देकर भी कोई सन्तुष्ट नही कर सकता और ऐसे पति है जो ऊँट की भाँति कब कौन-सी करवट लेंगे इसका पता नही। पर ऐसा कम होता है। ज्यादातर सासे ऐसी है जो अपनी बहुओ को गोद मे ले लेने को उत्कण्ठित होती है। ज्यादातर पति अपनी पत्नियो के प्रति एक

आकर्षण अनुभव करते हैं। योग्य वधू उनकी इस शुभाकांक्षा का उचित उपयोग करती है।

सबसे निभा लो

घर मे जाते ही लड़की को ध्यान से वहाँ की परिस्थिति देखनी चाहिए। घर में कौन वृद्ध जन हैं, किसकी बात सबसे ज्यादा चलती है, यह सब समझना-बूझना चाहिए। सबसे पहले उसी का हृदय जीतना चाहिए जिसका प्रभाव कुटुम्ब मे सबसे अधिक हो। सेवा, नम्रता, मधुर बोल द्वारा तुम यह कर सकती हो। जैसे सास हैं तो उनके प्रति सदा सम्मान का भाव रखना और उसे प्रकट करना, उनके पाँव दवाना, उनका ख्याल रखना—मतलब इस तरह आचरण करना कि वे तुम्हे अपनी बेटी समझें। उचित समय देख नम्रतापूर्वक कह भी सकती हो—"माँ! मै तो आपकी तुच्छ बेटी हूँ। कुछ जानती नहीं पर जब आपने कृपा-पूर्वक मुझे अपने चरणों मे ले लिया है तो मुझे अपने स्नेह से कभी वंचित न करना। मै अज्ञान और मूर्ख हूँ, कोई गलती हो जाय तो माँ की तरह मुझे बतायें और क्षमा कर दें।" ऐसी बाते यदि ईमानदारी से कही जायँ तो इनका बड़ा असर पड़ता है। सास एक अद्भुत् हर्ष का अनुभव करती है और समझती है कि वहू अच्छे घर की बेटी है और अच्छे माँ-बाप के बीच पली है और यह भी कि इससे निभ जायेगी—और यह घर की शोभा और गौरव बढ़ायेगी।

इसी प्रकार देखना चाहिए कि पति का स्वभाव कैसा है,

किन बातों मे उनकी ज्यादा रुचि है। जिन बातो से उन्हे प्रसन्नता हो उन्हे करने की कोशिश करनी चाहिए। प्रतिदिन उठकर पति के चरण छूकर या हाथ जोड़कर उन्हे प्रणाम करना चाहिए और रात को सोने के समय हाथ-पॉव दबाकर, पान-इलायची इत्यादि देकर उन्हे सब प्रकार सन्तुष्ट करना चाहिए।

देवरो और ननदो से यो बोलना चाहिए मानो तुम्हारे छोटे भाई-बहन हो। यो बोलो मानो शर्बत घोल रही हो। उनको पास बैठाकर उनकी बातो मे दिलचस्पी लो। जब वे तुम्हारे पास आये, प्रेम की मीठी बातो से उन्हे खुश कर दो। उन्हे अपनाकर आश्वस्त कर दोगी तो तुम्हारा मार्ग सुगम हो जायगा।

अगर घर मे जेठानियॉ है तो उनका सम्मान करो। उन्हे दीदी कहो, उनसे पूछकर, उनकी आज्ञा और सलाह लेकर घर-गृहस्थी के काम करो। उन्हे यह अनुभव न होने दो कि तुम उनके अधिकार मे हस्तक्षेप करना चाहती हो। उनसे मिल-कर, उनकी बनकर रहो। उनके बच्चो को प्यार करो, उनकी सेवा करो। जैसे कोई बच्चा मचल रहा है, उसे मॉ के सामने उठा लिया, प्यार किया और चुप कर दिया, किसी को कपडे पहना दिये, किसी को नहला दिया, किसी को कंघी चोटी कर दी। जब उनकी माताएँ देखेगी कि तुम उनके बच्चो को चाहती हो तो तुम्हारी प्रशंसा करेगी और तुम्हे भी चाहने लगेगी।

याद रक्खो कि प्रारंभिक विवाहित जीवन में एक वधू से इतने कार्यों की आशा की जाती है जिनकी पूर्ति प्रायः असम्भव है पर चतुर और योग्य वधू वह है जो जी-तोड़ परिश्रम करके सब को संतुष्ट और अपने पक्ष मे कर लेती है। सास चाहती है कि बहू मेरी बेटियो (जो विवाहित होकर चली गई हैं) का अभाव दूर कर दे। मेरी सेवा करे। मेरे घर को अपना घर समझे। पति चाहते हैं कि तुम उनके कार्यों मे दिलचस्पी लो; उनकी जीवन-सखी बन जाओ; सुख-दुःख में वे तुम पर भरोसा करें; उनके प्रति प्रेम से तुम्हारा हृदय भरा हो; तुम उन्हें अपना समझो। जेठानियाँ तुम्हें छोटी बहिन के रूप में चाहती हैं। मतलब जितने लोग, उतनी तरह की माँगे। तुम्हे सब पर ध्यान रखना पड़ेगा। इसके अलावा घर-गृहस्थी का संचालन भी सुघड़तापूर्वक करना होगा।

अनेक प्रकार की माँगें

अस्त-व्यस्त चीजें देखो तो उनको ठीक स्थान पर रख दो। पति के कमरे को व्यवस्था से रखो। घर को साफ-सुथरा रखो। कुछ ऐसा मानो तुम्हारे स्पर्श से वह चमक उठा है। नौकर और मजदूरनियो से कृपापूर्ण और मधुर व्यवहार करो। अक्सर नौकर ही घर को नष्ट करने वाले होते हैं और एक की चार लगाते हैं। मिठास के साथ तुम उनसे बहुत काम ले सकती हो और वे तुम्हारा अच्छा विज्ञापन करेंगे।

[१०]

पति का हृदय जीतने के उपाय

प्रिय कान्ता,

पिछले पत्र मे मै यह बता चुका हूँ कि विवाह के बाद स्त्री को किन बातो का ध्यान रखना चाहिए। आज मै यह बताना चाहता हूँ कि पति का हृदय जीतने के उपाय क्या है।

पिछले किसी पत्र मे कह चुका हूँ कि दुनिया मे न सब पुरुष राक्षस होते हैं और न सब स्त्रियाँ देवियाँ ही होती है। अधिक संख्या ऐसे स्त्री-पुरुषों की होती है जो सामान्य मनुष्य होते हैं और सामान्य मनुष्य की भाँति आकांक्षाएँ रखते हैं, सामान्य मनुष्य की भाँति ही उनमे दोष गुण होते हैं। इसलिए अधिकांश पति ऐसे होते हैं जिनके हृदय प्रयत्न करके जीते जा सकते है।

ज्यादातर लड़कियाँ विवाह के समय घबड़ाई हुई-सी दिखाई देती हैं। दुःख और रोदन के थकान से भरी हुईं, कभी बहुत कहने पर दो कौर मुँह मे डाला, कभी नही, आशंका और भय से जो दिन बीत गये है उनका बार-बार स्मरण करती हुईं, जो आने वाला है उसके प्रति, अनिश्चित होने के कारण, भय और शङ्का से भरी हुईं। दिल धड़क रहा है, फिर भी एक सुप्त-सी कामना की गूँज मन मे है; मुँह पर उदासीनता दिखाने का भाव है फिर भी भाव उधर ही उड़े जाते है। अजीब-सा यह समय लड़की के जीवन में आता है।

विकम्पित लड़की

पर इसमे घवड़ाने की कोई बात नहीं है। घवड़ाती वे लड़कियाँ है जिन्होने अपने भावी जीवन के विषय मे कभी न सोचा है, न कभी उसके लिए किसी तरह की तैयारी की है। यदि तुम पहले से अपने को तैयार रखोगी तो आत्म-विश्वास पूर्वक, विना किसी भय और आशंका के, जीवन के मार्ग मे आगे वढ़ सकोगी।

इस तैयारी के लिए, जिससे लड़की पति का हृदय जीत सकती है, सबसे पहली बात यह है कि वह अपने को खूब स्वस्थ रखे। जो लडकी टूटा हुआ और जर्जर स्वास्थ्य लेकर ससुराल जाती है वह, लाख गुणवती होकर भी और पति के उदार होने पर भी, सुखी होने की, आशा नही कर सकती। उसका जीवन रोते बीतेगा, वह स्वयं रोयेगी और और दूसरो को रुलायेगी। पति कितना ही उदार हो, कितनी ही सहानुभूति के साथ पत्नी को देखे पर याद रखने की बात है कि यह दोनो के जीवन का वसन्तकाल है। आज जव यौवन दोनो के हृदय के दरवाज़े पर खटखटा रहा है, तव उदासीनता से क्या फल निकलेगा? ऊसर और अनुत्पादक भूमि मे कौन मूर्ख किसान बीज बोयगा? इसलिए विवाह-योग्य प्रत्येक लड़की को सवसे पहले अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए। यौवन और स्वास्थ्य ये दो जीवन की सर्वोत्तम देन हैं। इन्ही को लेकर जीवन है—जीवन का आनन्द है। अस्वस्थ शरीर प्राणहीन—

स्वास्थ्य का महत्व

जैसा है। कौन उसकी ओर आकार्षित होगा। जब पति का मन यौवन के सपनों में झूलता हो तब रुग्णा पत्नी प्राप्त करके जीवन की साधों और उमंगों का नाश होने पर किसे खीझ न होगी ?

विवाहित जीवन केवल सद्‌गुणों के आधार पर चल नहीं सकता। सद्‌गुणों का आचरण करने के लिए यदि स्वस्थ शरीर नहीं है तो वे सद्‌गुण क्या काम देंगे ? फिर अस्वस्थ शरीर अस्वस्थ मन की पूर्व भूमिका है। एक बात और ध्यान देने की यह है कि विवाहित जीवन मे शरीर और मन दोनों का मधुर संयोग होता है। यौवन मे शारीरिक आकर्षण का भी कुछ तात्पर्य और प्राकृतिक अभिप्राय है। यह व्यर्थ नहीं है। सब स्त्रियाँ सुन्दरी नहीं होतीं पर स्वास्थ्य और प्राकृतिक मोहनी को क़ायम रखकर सब अपने को पति की दृष्टि में आकर्षक बना सकती हैं।

इसलिये पहली बात स्वस्थ शरीर और यौवन के प्राकृतिक आकर्षण की रक्षा है। शरीर और यौवन के इस आकर्षण को कृत्रिम और प्राकृतिक उपायो से देर तक कायम रखा जा सकता है। हलका भोजन, फलों का पर्याप्त मात्रा मे सेवन, खुली स्वच्छ वायु में टहलना, संयमपूर्ण जीवन स्त्री के शरीर-सौन्दर्य को देर तक कायम रखने मे सहायक है। सुबह उठकर गरम पानी मे नीबू का रस निचोड़ कर उसके छींटे मुँहपर देने से भी बड़ा लाभ होता है। लड़कियो को यह कभी न भूलना चाहिए कि प्रत्येक पति स्त्री मे कुछ न कुछ सौन्दर्य अवश्य चाहता है। फिर

जो कुछ तुमको मिला है। उसकी रक्षा करना और उसे बढ़ाना तो तुम्हारा कर्तव्य है ही।

दूसरी बात है प्रेम और प्रेम-कौशल की। ससुराल जाने के बाद लड़की को सब से पहले पति को प्रसन्न रखने की कला का अभ्यास करना चाहिए। यह कुछ मुश्किल काम नहीं है। जब पति के पास जाओ, अनुराग से हृदय भरा हो। तुम्हारी प्रत्येक बात मे उनके प्रति अपनापन का भाव हो। अवसर मिलते ही तुम्हे उनके चरणो मे सिर देकर कहना चाहिए कि 'मै आपके पास सयोग-वश आ गई, मै अयोग्य हूँ, आप समर्थ है। आप मुझे सँभाल लेंगे, आश्रय देंगे तो सम्भव है मै आपके योग्य बन सकूँ। पर जैसी भी हूँ, आपकी हूँ। आपकी रहना चाहती हूँ, आशा है, आप अपने प्रेम और आश्रय से मुझे वंचित न करेंगे।' इस प्रकार की मधुर बातो का एक बड़ा लाभ यह है कि पुरुष का अभिमानी हृदय तृप्त हो जाता है, उस पर एक नशा चढ़ जाता है और वह समझता है कि मेरी पत्नी पूर्णतः मेरी है। स्त्री को ऐसी बातो का खूब लाभ उठाना चाहिए। पुरुष के अहङ्कार को चोट न पहुँचे और उलटे वह तृप्त रहे, जो स्त्री इसे जानती और तदनुकूल आचरण करती है वह बहुतेरी कठिनाइयो को अपने-आप हल कर लेती है।

प्रेम का कौशल

इस सम्बन्ध मे एक बात और कहूँगा। जिस लड़की का विवाह हो गया है उसे सदा चेष्टा करनी चाहिए कि उसका

जीवन अधिकाधिक पति के जीवन के अनुकूल हो। मान लो,

अनुकूल जीवन बनाने की चेष्टा

पति देवता तुम्हें पढ़ाना चाहते हैं या कोई कला या सङ्गीत या वाद्य की शिक्षा देना चाहते हैं, या वे तुम्हे ऐसा बनाना चाहते हैं कि तुम उनके जीवन-कार्य मे सहायक बनो तो तुम्हे चाहिए कि सच्चाई के साथ वैसा करने का प्रयत्न करो। अपने जीवन को पति के जीवन के लिए जितना ही अनिवार्य, आवश्यक और उपयोगी बनाओगी उतना ही तुम पति के हृदय पर राज कर सकोगी। कई लड़कियाँ या स्त्रियाँ इस सम्बन्ध मे जड़ होती है। उनमे न उमङ्ग होती है, न ईमानदारी। मै एक स्त्री को जानता हूँ जिसके पति एक अच्छे नेता और जन-सेवक थे। उनकी बड़ी अकांक्षा थी कि पत्नी प्रयत्न-पूर्वक थोड़ा थोड़ा ज्ञान राजनीति तथा सार्वजनिक विपयो के सम्बन्ध मे प्राप्त कर ले। दस साल तक वे लगातार चेष्टा करते रहे पर पत्नी वही घरेलू पचड़ो मे अपने को लगाये रही और उस ओर कुछ उन्नति न कर सकी। फलतः दोनो का जीवन दुःखी है। इसके विरुद्ध एक मामूली योग्यता की लड़की है। चार-पाँच साल पहले ही इसका व्याह हुआ। बेचारी के माँ-बाप इस योग्य न थे कि कुछ अच्छी शिक्षा दे पाते। माँ मर गई थी। घर में कोई न था। लोग कहते थे—कैसे यह पार लगेगी? पर जब उसका विवाह हुआ, उसने अपने को ऐसा सम्भाला और पाँच वर्षों मे इतना सीखा कि आज गृहलक्ष्मी बन गई है और पति के दिल की रानी है। जो चाहती है,

कर सकती है।

मै यह नहीं कहता कि लड़कियाँ अपने व्यक्तित्व को एक दम भुला दें, न मेरा यही मतलब है कि पति की हर भली-बुरी बात, हर सनक का अनुकरण स्त्री को करना ही चाहिए। मेरा आशय इतना ही है कि जिस बात की ओर उनकी विशेष रुचि हो या जैसा वह अपनी पत्नी को बनाना चाहते है अगर उसमे कोई बुराई नही तो पूरी तरह उसके लिए चेष्टा करनी चाहिए।

जीवन मे दुःख और विपत्ति सभी पर आती है। अगर पति कभी बीमार पड़ जाय या दुखी हो या किसी विपत्ति मे पड़ गया हो तो ऐसे समय विशेष रूप से उसके कष्ट और दुःख में प्रति बड़ा मधुर और अपनेपन का व्यवहार करना चाहिए। बीमार है तो उनकी सेवा, देखभाल वैसे ही करनी चाहिए जैसे माता बच्चे की करती है। उनको अनुभव हो कि इस समय उन्ही मे तुम केन्द्रित हो, खाना पीना और सब काम इस समय कोई महत्व नहीं रखते। इस कष्ट के समय की हुई प्रेमपूर्ण सेवा साधारण समय की चौगुनी सेवा से भी अधिक मूल्यवान और प्रभावशालिनी होती है। इसी तरह यदि उनका काम छूट गया है या 'आर्थिक विपत्ति आ गई है तो तुम्हे उन्हे मधुरवाणी मे सान्त्वना देनी चाहिए—'छिः! तुम दुखी क्यो हो? दिल छोटा मत करो। दुःख-सुख तो आते-जाते रहते हैं। तुम रहोगे तो बहुतेरा सुख देखने को मिलेगा।'

इसके साथ तुम्हे शक्ति-भर खर्च मे कमी करनी चाहिए। मतलव, घर-गृहस्थी मे कुछ न कुछ लगा रहता है। जव तुम्हारे पति चिन्तित हों, दुखी हो तो तुम्हे उनके प्रति अपने हृदय का प्रेम प्रकाशित कर उनको सान्त्वना देनी चाहिए। ऐसे समय की सान्त्वना तथा सेवा पति के हृदय पर वड़ा गहरा असर करती है।

तीसरी वात यह कि तुम अपने व्यवहार से या वात से कभी पति का अपमान न करो। वहुत-सी स्त्रियाँ वात-वात में पति की हँसी उड़ाया करती हैं। व्यंग भी कर देती हैं। पर कभी कभी ये व्यङ्ग ऐसे चुभते हैं कि जीवन को छलनी कर देते हैं। रस वहाँ ठहरने नही पाता। जो आता है, चू पड़ता है। स्त्री को पति की रुचि की प्रशंसा करनी चाहिए और उसके प्रति कृतज्ञता का भाव व्यक्त करते रहना चाहिए। विशेपतः दूसरों के सामने कभी कोई ऐसी वात मुँह से न निकालनी चाहिए जिसको पति के दिल मे चुभने की आशंका हो। वहुत-सी स्त्रियाँ पति के कुछ कहने पर लाल आँखों से देखती हैं, झनझना कर काम करती है, वर्तन क्रोध के मारे खड़खड़ाते है, चीजे धीरे से जमीन पर नहीं रखी जाती, वरवस गिर कर आवाज़ करती हैं। ये स्त्री के लिए वहुत वुरी वातें हैं। जो स्त्री ऐसा करती है वह अपने पाँव मे कुल्हाड़ी मारती है। स्त्री-धर्म वड़ा कठिन है। सुखी होने की इच्छा रखने वाली गृह-लक्ष्मी वा योग्य गृहणी ज़हर पी जाती है और अमृत का दान पति और कुटुम्बियो को करती है।

परिश्रम करने का यह मतलब नही कि तुम दासी हो या दासी की तरह काम करो। यदि ऐसा है तो समझ लो कि तुम्हारे मन मे नरक की दुनिया बस चुकी है और लाख सिर पटकने पर भी तुम उसे स्वर्ग की न बना सकोगी। श्रम करना असली बात नहीं है। ठीक दिशा मे और ठीक मनःस्थिति मे काम करना असली चीज़ है। यदि भारी, चिन्ताग्रस्त और भ्रमित चित्त से तुम रात-दिन पिलती हो तो भी व्यर्थ है। यह श्रम न केवल तुम्हारे मन को थका देगा बल्कि शरीर को घुन की तरह खोखला कर देगा।

वही काम अपने को दासी समझ कर करने की जगह अगर स्वामिनी और गृहलक्ष्मी के रूप मे करती हो तो न केवल मन मे आनन्द का अनुभव करोगी बल्कि इतने परिश्रम का भी तुम्हारे शरीर पर कोई बुरा प्रभाव न होगा। तब तुम समझोगी घर मेरा है, काम मेरा है। तब उसमे तुम्हारा मन हलका रहेगा; हृदय आनन्द से भरा, शरीर मे जवानी छलकती हुई मानों जितना ही काम करती हो थकावट उतनी ही दूर भागती है। काम तो करना ही है पर काम करते हुए विवशता की अनुभूति करना मानो नरक की आग मे जलना है। इससे बढ़कर दुःख दूसरा नहीं, इससे बढ़कर दुर्भाग्य भी नही।

याद रखो, स्त्री प्रेम की देवी है। सेवा की मूर्ति है। पारिजात वृक्ष की भाँति वह जीवन के सम्पूर्ण कुसुम एक एक करके पति के चरणो मे चढा देती है। देना और देना—यही उसकी प्रकृति है।

इसमे ही उसके जीवन की सार्थकता है; इसी में उसकी परणति है। पुरुष तो अहङ्कारी है। लेने मे, अधिकार में तृप्ति अनुभव करने वाला। नारी उसे अपने हृदय के मधुर गन्ध से दिव्यता प्रदान करती है और सब कुछ देकर, सब कुछ निछावर करके स्वामिनी बन जाती है। यह परम-रिक्ता ही, परमपूर्णा अन्नपूर्णा है।

मैंने थोड़े मे तुम्हे चन्द जरूरी बातें बता दी हैं। कुछ और बातें रह गई हैं, जिन्हे आगे लिखूँगा।

[११]

दिल की दुनिया बनाम गृहस्थ की दुनिया

चि० कान्ता,

गृहस्थी के विपय मे पिछले पत्रो मे मैं वहुत सी वातें तुम्हे लिख चुका हूँ। फिर भी न जाने कितनी वातें लिखने को रह गई हैं। इस पत्र में एक वात की ओर तुम्हारा ध्यान दिलाना चाहता हूँ।

दुनिया मे सुख-दुःख सभी को भोगने पड़ते हैं। चाहे किसी स्थिति और मर्यादा का आदमी हो यदि वह केवल सुख चाहे तो उसका भ्रम है। यह ठीक है कि वाह्य सुविधाओ, आर्थिक अवस्था, शारीरिक आरोग्य इत्यादि पर भी सुखी जीवन की उठान निर्भर है पर, एक सीमा तक, सुख-दुःख अपने हाथ की वात है। जो प्राणी सदा असंभव कल्पनाएँ करते रहते हैं; सपनो की दुनिया मे विचरते हैं वे सदा चिन्तित और दुखी रहते हैं। यह स्वाभाविक है कि उनकी कल्पनाएँ और अभिलाषाएँ पूरी न हों, और सपनो का संसार सपना ही रह जाय।

दुनिया मे सुख केवल उस आदमी को मिलता है जो हर स्थिति मे प्रसन्न रहना जानता है। यह स्वभाव की वात है। तुम

सदा प्रसन्न रहो

देखोगी कि वहुतेरे आदमी ग़रीबी मे, कष्टपूर्ण स्थिति में, भी मस्त रहते हैं, जब दूसरे सदा अपने कष्टो और अभावो का रोना रोते रहते है। दुःख मे, सुख में, अन्धकार मे, प्रकाश मे जो

कुछ मिला है उस पर सन्तुष्ट रहने वाला ही सुखी हो सकता है। इसका मतलब अकर्मण्यता नही है। मै यह नही कहता कि जिस स्थिति मे तुम हो उसे और अच्छा बनाने की चेष्टा या कामना न करो। मेरा कहना इतना ही है कि शक्ति भर प्रयत्न करने के बाद भी जो नही मिला उसके लिए रोना व्यर्थ है। जहाँ शान्ति नही है, संतोष नहीं है, वहाँ सुख भी नहीं है। वस्तुतः सुख मन की एक वृत्ति है। प्रयत्न से हर हालत मे सुखी रहने का अभ्यास किया जा सकता है।

सब सपने पूरे नहीं होते

आकांक्षाएँ और सपने तो सबके होते हैं। इनका अन्त नहीं है। स्वभावत. तुम्हारे मन मे भी न जाने कितनी इच्छाएँ और कल्पनाएँ होगी। इसी प्रकार जिसके घर तुम जाओगी, उस तुम्हारे भावी पति के मन मे भी अनेक कल्पनाएँ और अभिलाषाएँ होगी। संभव है, वह परी-सी पत्नी चाहता हो, जैसा आज-कल के अधिकांश लड़के चाहते हैं और तुम उसके स्वप्नो की पूर्ति न कर सको। इसी प्रकार की और बातें भी कही जा सकती है। जो पति-पत्नी इन बातो का ख्याल करके मन ही मन तड़पते रहते है वे कभी सुखी नहीं हो सकते। दिल की सम्पूर्ण इच्छाएँ न किसी की पूरी हुई हैं, न होंगी।

फिर घर-गृहस्थी मे तो अक्सर ऐसा होता है। वहाँ चार को देख कर चलना पड़ता है, चार का ख्याल करके तब अपने बारे मे सोचना पड़ता है। गृहस्थ-जीवन सामाजिक जीवन

है, व्यक्तिगत नहीं। इसमें तुम्हे सिर्फ अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति की चिन्ता नहीं करनी है; सास-ससुर, जेठानियों-देवरानियों, पति और घर के बच्चो—सभी को देखना है, सभी को सॅभालना है।

फिर स्त्री का जीवन तो भोग की अपेक्षा त्याग का ही जीवन अधिक है। तुमको तो सफल गृहणी बनने के लिए प्रसन्नता-पूर्वक अपनी अनेक इच्छाओ का दमन

त्याग का जीवन

करना होगा। जब तुम्हारा दिल रो रहा होगा तब दूसरो के सुख के लिए तुम्हे हॅसना पड़ेगा। जब तुम विश्राम की बात सोचती होगी तब काम और बढ़ जायगा। जब तुम कहीं जाने की योजना बना रही होगी, बच्चे बीमार पड़ जायॅगे। मतलब, एक न एक चिन्ता और झंझट लगी रहेगी। समाज का वर्तमान गठन ही कुछ ऐसा है कि इसमे स्त्री को अधिक कष्ट सहना पड़ता है, अधिक त्याग करना पड़ता है। पर इसी कष्ट से नारी पवित्र है और इसी त्याग से वह महिमामयी है।

इसलिए पहली बात तो मै तुमसे यह कहूँगा कि अपने हृदय को नियंत्रित करके रखो; व्यर्थ की और कभी पूर्ण न होने वाली आकांक्षाओ को हृदय मे न आने दो, ऐसे सपनों मे मत उड़ो जिनकी पूर्ति की जीवन मे कोई आशा नहीं है। जो नही है उसकी आशा में जो है उससे हाथ धो बैठना कोई बुद्धिमानी नही। अपने मन मे निरन्तर बढ़ने वाली अभिलाषाओं के दंश

का अनुभव करने से बढ़कर दूसरा दुःख नही है। जब चलना ज़मीन पर है तब आसमान मे उड़ने की चेष्टा एक प्रकार की मूर्खता है। जो है, उसे सँभालो, सँवारो, उसका अच्छे से अच्छा उपयोग करो।

इसके लिए दूसरी ज़रूरी बात यह कि भावनाओ की आँधी मे उड़ने की आदत छोड़ दो। बहुत-से आदमी इतने भावप्रवण (Sentimental) होते हैं कि बात का बतंगड़ बना लेते हैं। किसी ने हँसी–मज़ाक मे कुछ कह दिया या व्यंग कर दिया या और कोई बात हो गई तो बैठे हैं और मकड़ी की तरह उसी का ताना-बाना बुनते जा रहे है। यह बुरी आदत है। तुनुकमिज़ाजी एक भयंकर रोग है जिसकी गहरी कीमत गृहस्थ-जीवन मे चुकानी पड़ती है। स्त्री को एक साथ ही गम्भीर और सरल होने का अभ्यास करना चाहिए। दुःख और चिन्ता, कष्ट और पीड़ा के प्रसङ्ग को हलकेपन से, हँस कर भूल जाना चाहिए। कटु बातो या घटनाओ को भूल जाने की आदत से बढ़ कर हितकर बात गृहस्थ-जीवन मे दूसरी नही है। बहुत-सी स्त्रियाँ ऐसी बातो को गाँठ बाँध लेती है और खुद तो आग मे घुलती ही रहती है दूसरो के जीवन पर भी दुर्दिन की बदली की तरह छा जाती हैं।

तुनुकमिजाजी एक रोग है

प्रायः स्त्रियाँ वाचाल होती हैं। शिक्षा और संस्कार की कमी

के कारण स्त्रियाँ ऐसी स्त्रियों को अक्सर पसन्द करती हैं। ये औरतें इधर की उधर लगाने में पटु होती हैं।

सच्चा मित्र

कोई कोई तो ज़बान की इतनी मीठी होती हैं कि उनकी जिह्वा के पीछे छिपे विषैले डक का पता बिल्कुल नहीं चलता। अज्ञान में, अचेतावस्था मे वे डस लेती हैं। देखा, घर मे कोई बात हुई, बस तुम्हे भड़काने लगीं। इसलिए सखियो के चुनाव मे बहुत कृपण और सावधान होने की आवश्यकता है। यह ठीक है कि सच्चा मित्र संसार की सर्वोत्तम विभूति है पर यह भी ठीक है कि वह ईश्वर की भाँति ही दुर्लभ है। जो औरत दूसरो की निन्दा करती है उससे सर्पिणी की तरह बचो; वह असावधानी में तुम्हे डॅसेगी और तुम्हारी सोने की गृहस्थी को मिट्टी करके छोड़ेगी। निन्दालु स्त्रियों के बीच मे ज़्यादा बैठना ही नहीं चाहिए। अपने मन की बातें भी जल्दी किसी से नहीं कह देनी चाहिएँ।

दुनिया मे जितने भी दुर्गुण हैं उनमे ईर्ष्या और बेकारी दो अत्यन्त भयंकर दुर्गुण हैं। स्त्रियो मे प्रायः ईर्ष्या की मात्रा बहुत होती है।

ईर्ष्या और बेकारी

ऐसा अक्सर देखने मे आता है कि पति की उदारता को स्त्री न केवल नापसन्द करती है बल्कि उसके प्रति कुभावनाएँ भी रखती है और कहीं घटना-वश पति ने किसी स्त्री के प्रति किसी प्रकार की उदारता दिखा दी तब तो पत्नी के लिए प्रायः असह्य हो जाता है। ऐसी भावनाएँ रख कर स्त्रियाँ वस्तुतः अपना ही

अपमान करती है—यानी मान लेती है कि स्त्रियो का भोग-विलास के अतिरिक्त और कुछ उपयोग नही है। स्त्रियो को थोड़ा उदार होना चाहिए और बात-बात मे शंका और सन्देह को दिल मे स्थान नहीं देना चाहिए। सन्देह वह नागिन है जिसका काटा मुश्किल से बचता है। फिर एक बार सन्देह हो जाने पर दुनिया भर की बे सिर पैर की बातें सूझती है।

बेकारी से बढ़ कर मन और शरीर को खराब करने और घुलाने वाली कोई चीज नही है। बेकार प्राणी के मन मे तरह-तरह की निर्मूल कल्पनाएँ आती हैं और अक्सर कुरुचिपूर्ण पुस्तकें पढ़ने, कुरुचिपूर्ण बातें करने और सुनने मे उसका वक्त बीतता है। तुमको चहिए कि सदा किसी न किसी उपयोगी और हितकर काम मे लगी रहो। काम-काजी औरत अपने आप अनेक चिन्ताओं से बच जाती है। उसे इतनी फुर्सत ही नहीं मिलती कि वह तिल का ताड़ बनावे। कुछ काम न हो तो घर की चीजों को करीने से रखने मे लग जाओ या बच्चो को बैठाकर उनसे हित की बाते करो; अच्छी कहानियाँ सुनाओ, अच्छी बातें बताओ। कपड़े की काट-छाँट, सीने-पिरोने मे भी समय का सदुपयोग हो सकता है। या फिर थोड़ा विश्राम ही कर लो। परिश्रमी और समझदार स्त्री का स्वास्थ्य अच्छा रहता है और उसके स्पर्श से घर चमक उठता है; उसमे एक प्रकाश, एक सौन्दर्य आ जाता है।

जिस काम को करो उसमे रस ले-लेकर, दिलचस्पी के साथ

सन लगा कर करो। तव वह थकाने वाला नहीं, आनन्द देने वाला वन जायगा। मुँह लटका कर, कोसते और वड़वड़ाते हुए, कोई काम करने से न करना कही अच्छा है।

मतलव मेरा यह कि विवाहित जीवन संयम और त्याग का जीवन है। यह कठोर वास्तविकताओ का जीवन है। दिल की दुनिया और गृहस्थ की दुनिया मे वड़ा अन्तर है। दिल मे न जाने तुमने कितने खेल खेले होंगे, न जाने कितनी कल्पनाएँ रच रखी होगी, न जाने क्या-क्या हौसले होगे। न जाने क्या-क्या सोच रखा होगा। यह समझना छोड़ दो कि यहाँ वे सव पूरे होंगे। हजार में एक इच्छा जिसकी पूरी हो गई वह भाग्यवान है।

———

साधना खण्ड: समस्याएँ और हल

[१२]

अपने को देखो !

चि० कान्ता,

गृहस्थ-जीवन की समस्याएँ इतनी अधिक और इतने प्रकार की हैं कि चाहे कितना लिखता जाऊँ, पूरी न होंगी। मै काफी लिख चुका हूँ और जितना लिख चुका हूँ, यदि पढ़कर गुनोगी तो वे कम नही हैं। तुम चाहो तो उनकी सहायता से ऐसी बन सकती हो कि तुम्हारे स्नेहियों को तुम पर गर्व हो।

कान्ता, बड़ा ही विकट समय यह आया है। इसमे स्त्रियों मे नशा पैदा करनेवाली, उनको भटका देने वाली बातें बहुत कही जा रही हैं। तुम जानती हो, मै स्त्रियो की स्वतंत्रता का कितना प्रबल समर्थक हूँ। मैने खुद इसके लिए कुछ कम कष्ट नहीं उठाया है। परदा मै नहीं चाहता, विवाह के सम्बन्ध मे काफी उदारता को आवश्यक मानता हूँ—इस सीमा तक कि अन्तिम निर्णय लड़की के हाथ मे होना चाहिए। शिक्षा और नागरिक अधिकारो के पक्ष में मैने सदैव लिखा और कहा है और जितना लिखा और कहा है, उससे ज्यादा किया है। मै उन्हे वे सब अधिकार देने का समर्थक हूँ जो वे मॉगती है।

फिर भी कुछ लोगों को मेरे विचार अजीब-से लगते है। कुछ पुराने; कुछ नये। मै इससे इन्कार नही करता। मेरे लिए कोई चीज़ पुरानी होने से न बुरी है, न नई होने से अनिवार्यतः

अच्छी है। सत्य और कल्याण-मार्ग के पथिक के लिए पुराना-नया जैसी कोई चीज नहीं है। जो हितकर है वही वाञ्छनीय है।

और मै मानता हूँ कि जिस नारी ने, स्वेच्छासे, तिल-तिल करके अपना सर्वस्व देवता के ऊपर चढ़ा दिया है; जिसने जीवन मे सदा देना ही जाना है; जो दिन हो, रात

वह गौरव ! हो, अंधकार हो, प्रकाश हो, दुर्दिन हो सुदिन हो निरन्तर अपने स्नेह की बाती जलाये जीवन के कटकाकीर्ण मार्ग पर बढ़ी जा रही है, जिसकी आँखें स्नेह-राग से रजित है, जिसके मुख पर मातृत्व की दिव्य ज्योति है, जिसके अंचल की छाया मे उसके बच्चे निश्चिन्त है, जिसने अपनी करुणा से, अपने प्रेम से, अपनी सेवा से पुरुप का सस्कार किया है, वह नारी पुरुप से निश्चय श्रेष्ठ है। समाज मे जो ज्ञान है वह पुरुष है; जो संस्कृति है वह नारी है। तब खीझ यह देखकर होती है कि क्यो यह नारी आज लघुता के भाव से श्रीहीन हो रही है। क्यो वह पुरुष से बराबरी का दावा करती है—क्यो नहीं वह अधिकार के साथ अपने गौरव की घोषणा करती कि तुम पुरुप जो भी हो, मैं तुम्हारी माँ हूँ।

आज तो अत्यन्त शिथिल वाणी मे शब्द निकलते हैं। आज पुरुप को नतमस्तक करने वाला मातृत्व का ओज तुम न चाहोगी? अपनी सेवा और मृदुलता से विद्रोही और हिसक पुरुप को सयत और सभ्य कर लेने के दावे से भी क्यो इन्कार करोगी? वह गौरव जो युग-युग से नारी ने अर्जित किया है, वह महत्त्व

जो उसे मानवता के विकास के इतिहास ने दिया है, वह मूल्य जो जातियो और सभ्यताओ के इतिहासो के पन्नों में उसे बार-बार मिला है आज क्या उसका न होगा ?

मै नारी को सब प्रकार के अधिकार देने की आवाज़ उठाता हूँ पर कहूँगा कि इस अधिकार के साथ वह पुरुष का अनुकरण, उसकी नकल न करे; वह अपनी ओर देखे,

अपनी ओर देखो!

अपने गौरव की परम्परा की ओर देखे। वह उस त्याग की ओर देखे जिससे मानव मे पशुता पराजित हुई है और देवत्व को बल मिला है। वह उस प्रेम को देखे जिसको पाकर मनुष्य धन्य हुआ है। पथभ्रष्ट, पराजित, परमुखापेक्षी और स्वार्थ ने जिनके हृदय का रस सुखा दिया है उन पुरुषो की ओर न देखे।

जगत् मे प्रेम के दान से बढ़कर कुछ नही है। मूर्खता मे प्रायः कह दिया जाता है कि मानव मे हिंसा की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। तब क्या प्रेम की वृत्ति

प्रेम का दान

अस्वाभाविक है ? क्या हिसा से ही जगत् का इतना विकास हुआ है ? सभ्यताएँ और और सस्कृतियाँ उसी के सहारे पनपी और खड़ी हुई है ?

आखिर किसने आदमी को भेड़िया से आदमी बनाया ? किसने उसमे ममत्व का विस्तार किया ? किसने उसमे श्रेष्ठता के सस्कार पैदा किये ? क्या बिना प्रेम के दान के वह सब संभव होता जो आज तक हो सका है ?

उस काल मे जब पुरुष जंगली, स्वच्छन्द, किसी की न सुनने वाला, अपने अहंकार मे विस्मृत, बाधा-बंध विहीन, अपने अस्त्रो पर भरोसा करने वाला था, किस सभ्यताके शैशव मे अधिकार से नारी ने उसे, पालतू बना लिया, किस शक्ति से उसने उसे अनुरक्त किया ? किसके कौशल से उसने उन झोपड़ियो का निर्माण किया जिनमे विद्रोही और हिंसक मानव ने, अपनी सभ्यता के शैशव मे, सुख की चंद घड़ियाँ बिताई होगी ?

आज उस महाशक्ति की चिनगारी क्यो बुझ गई है ?—उस महाशिक्त की जिसके रहस्य-ज्ञान की जिज्ञासा मे पुरुष आरंभ से भूला रहा है। आज शिथिल, असहाय, स्थान-भ्रष्ट, आत्म-विस्मृत होकर नारी कहाँ जायगी ?

बस इतना ही कहता हूँ, कहता रहा हूँ और कहना चाहता हूँ। मानव जाति की संस्कृति को जन्म देने और उसका पथ-प्रदर्शन करने के अपने गौरव से तुम वंचित न हो; अपनी उस मातृत्व की, मृदुल स्नेह की शक्ति से तुम वचित न हो जिससे ससार मे आदमी का जी सकना, एक सीमा तक, आज संभव हुआ है। आज मानवता के संकट काल मे क्या स्नेह की वह धारा, जो कभी नही टूटी, समाप्त हो जायगी ? क्या तुम्हारा चिर-मगल का दान आज समाप्त हो जायगा ? पुत्री के रूप मे, बहन के रूप मे, पत्नी और जीवन-सखी के रूप मे, माता के रूप मे तुमने जगत् को जो दिया है, क्या उससे आज विमुख होगी ?

कान्ता, तुम समझदार हो। इन बातों को समझने और परखने की तुम्हारी उम्र है। मैं नही चाहता कि तुम स्त्रीत्व का विज्ञापन बनो; मैं चाहता हूँ कि तुम उसका गौरव बनो। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी विद्या और बुद्धि से मित्रगण चमत्कृत हों; मैं चाहता यह हूँ कि तुम्हारे द्वारा पीडित, दुखित, क्षुब्ध मानव को आश्वासन प्राप्त हो। मै तुम्हे 'पुरुष' नहीं देखना चाहता; मै तुममे श्रेष्ठ 'नारी' का विकास चाहता हूँ—ममतामयी, मंगलमयी, कल्याणमयी, जीवन और प्रकाशमयी नारी !

कान्ता ! हार्दिक आशीर्वाद के साथ इस पथ पर तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ।